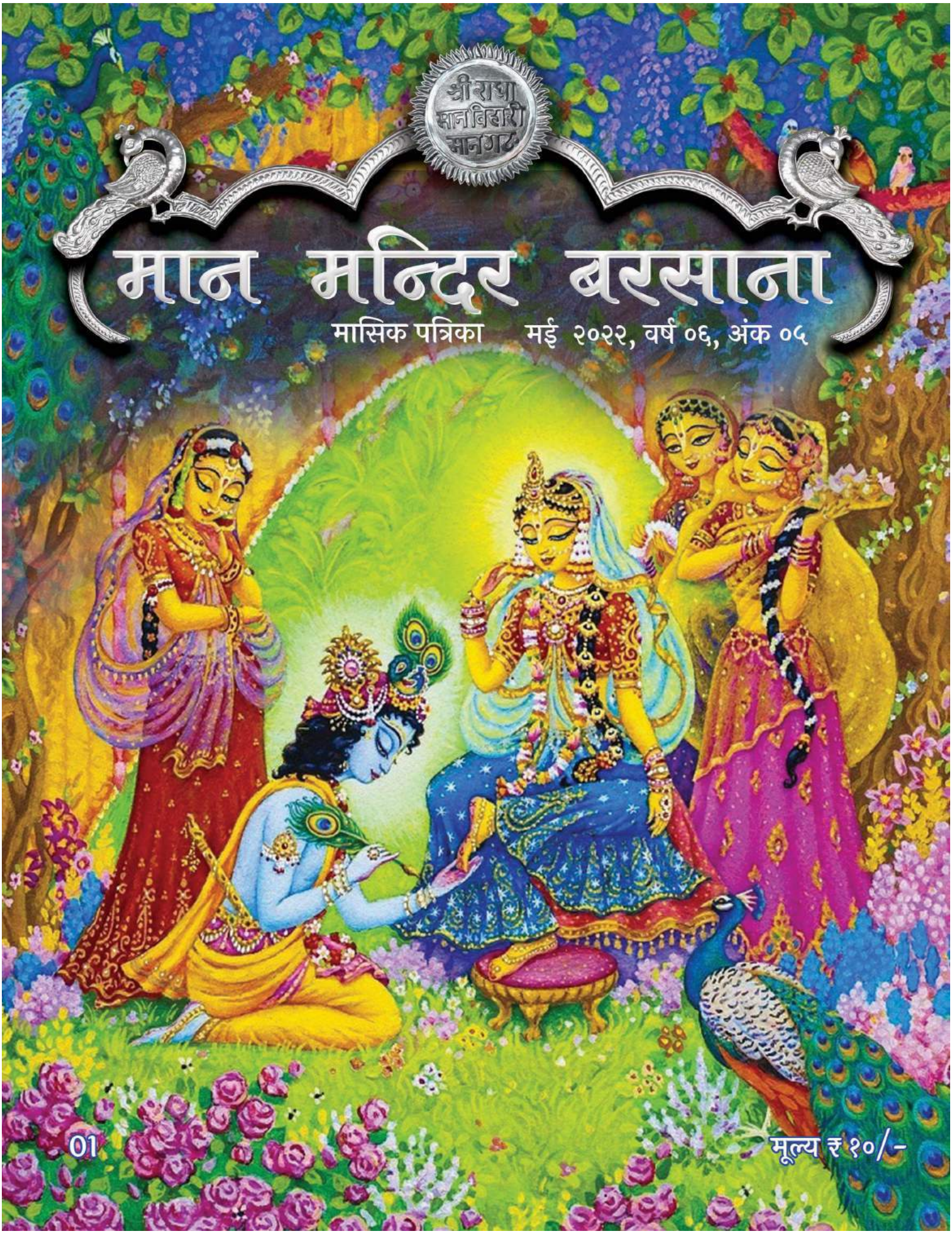

मान मन्दिर बरसाना

मासिक पत्रिका मई २०२२, वर्ष ०६, अंक ०५

01

मूल्य ₹ १०/-

खण्डार, सवाई माधोपुर, राजस्थान में पूज्या व्यास साध्वी श्री मुरलिका जी द्वारा श्रीमद्भागवत कथा

अनुक्रमणिका

विषय- सूची **पृष्ठ- संख्या**

१. श्रीकृष्णप्रेम की ध्वजा गोपिकाएँ.....०५
२. समस्त समस्याओं का समाधान ०७
३. परम करुणामाय 'श्रीमहाप्रभु –परिकर १०
४. ससक्त व सरस साधन 'श्रीहरिगुणगान'.....१३
५. आराधना ही सच्ची सेवा १५
६. परम कल्याणकारी 'श्रीभगवान्नाम' १७
७. अनिष्ट विनाशक 'श्रीनामाराधन' १९
८. रसोपासना से श्रीभगवत्प्राप्ति सहज २२
९. आराधन-प्रेरक संत 'बाबाश्री' २४
१० भगवद्-अनुभव की पहिचान २६
११ 'गान' में नवधा भक्ति २८
१२. आराधन-निष्ठ बालिका 'किशोरी'.....३०
१३. फलाकांक्षा के त्याग से विशुद्ध योग.....३३

|| इक बार मेरे दिल में चले आइये गोपाल ||

सूखी बगिया में बनके, घटा छाइये गोपाल।
* करने दया गरीबों पे, आये तुम दुनिया में,
समझ नहीं पाया मेरा, दुर्भाग्य है गोपाल।
*फिर भी न जाने क्यूँ भरोसा, अब भी तेरा है,
नासमझियों पे मेरी तरस खाइये गोपाल।
*मूढ़ मैं तेरी दया को नेक न समझा,
हम जैसे मूढ़ों पर भी, नजर डालिये गोपाल।
*तुम मुझको भूल जाओगे, तो मेरा क्या होगा,
मेरा सहारा और ना, यह समझिये गोपाल।
*अति तुच्छ हम जैसे तो, अगणित ही तुम्हारे हैं,
तुम जैसे मेरे एक हो, ये समझिये गोपाल।

— *पूज्यश्री बाबामहाराज कृत*

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो।
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो।
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो।
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो।
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो।
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्‌यो ।

— *पूज्यश्री बाबामहाराज कृत*

संरक्षक- **श्रीराधामानबिहारीलाल**

प्रकाशक – **राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान,**
गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)
mob. राधाकांत शास्त्री 9927338666
ब्रजकिशोरदास.....6396322922
(Website :www.maanmandir.org)
(E-mail :info@maanmandir.org)

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८:०० से ९:०० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ७:३० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं।

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले।"

*** योजना ***

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकाले व मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवा-द्रव्य किसी विश्वसनीय गौ-सेवा प्रकल्प को दानकर गौ-रक्षा कार्य में सहभागी बन अनंत पुण्य का लाभ लें। हिन्दू-शास्त्रों में अंश मात्र गौ-सेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है।

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें, जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें। हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ। जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवतजी ३/७/४१)

अर्थात् 'भगवत्तत्त्व' के उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, 'समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य' उस पुण्य के सोलहवें अंश के बराबर भी नहीं हो सकता।

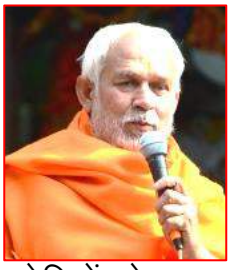

प्रकाशकीय

अनन्यतापूर्वक जो जन नित्य प्रभु का स्मरण करते हैं, उनके लिए वे प्रभु सदा सुलभ होते हैं –

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥ (श्रीगीताजी ८/१४)

गोपियों को न स्नान की सुधि थी और न ही वस्त्र-धारण की, कब सबेरा होता है और कब संध्या...श्रीकृष्णप्रेम में ऐसी डूबी रहती थी कि उन्हें कुछ भी ज्ञात नहीं रहता था; भगवान् के गुण-कीर्तन में अनुरक्त उन ब्रजदेवियों ने उस परात्पर परब्रह्म को इसी गुण के कारण अपना दास बना लिया। 'भगवन्नाम' स्वयं भगवत्स्वरूप है, उससे सहज सर्वसिद्धि सुलभ हो जाती है। महापातकी लोग भी नाम-कीर्तन की शरणागति से परमपद को प्राप्त हो जाते हैं। शास्त्र कहते हैं कि कोई 'व्यक्ति' भीषण आपत्ति में भी यदि विवश होकर के नाम की शरण ग्रहण करता है तो वह शीघ्र ही सभी भयों से मुक्त हो जाता है, यही नहीं स्वयं 'भय' भी नाम लेने वाले से डरने लग जाता है –

आपन्नः संसृतिं घोरां यन्नाम विवशो गृणन् ।
ततः सद्यो विमुच्येत यद्बिभेति स्वयं भयम् ॥ (श्रीभागवतजी १/१/१४)

कलियुग में जीव साधनशून्य हो जाता है, यही कारण है कि भगवान् ने कृपा करके उसे सरलतम साधन का मार्ग दिखाया है, वह है – नाम-संकीर्तन। पद्मपुराण में 'नाम' की अनन्त महत्ता का निरूपण मात्र एक श्लोक में अभिव्यक्त कर दिया है – **गोकोटि दानं ग्रहणेषु काशी माघे प्रयागे यदि कल्पवासी ।**

यज्ञायुतं मेरुसुवर्ण दानं गोविन्द नाम्ना न भवेच्च तुल्यम् ॥ (पद्मपुराण)

काशी में करोड़ों गायों के दान देने से, माघ मास में प्रयाग में कल्पवास करने से, अनेक यज्ञ करने से तथा स्वर्ण-पर्वत का दान देने से जो पुण्यफल नहीं मिलता है; वह मात्र एकबार भगवन्नाम सुनने-सुनाने से प्राप्त हो जाता है। यही कारण है हमारे पूज्य बाबाश्री ने अपनी साधना में संकीर्तन को सर्वोत्कृष्ट स्थान दिया। नित्य कीर्तन का ही पुण्य-प्रताप है कि बड़े-बड़े अकल्पनीय कार्य भी सहज सुलभ हो जाते हैं। संकीर्तन-महिमा को लेकर वर्तमान मास का पत्रिकांक आपकी सेवा में प्रस्तुत है।

प्रबन्धक

राधाकान्त शास्त्री

श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

श्रीकृष्णप्रेम की ध्वजा 'गोपिकाएँ'

बाबाश्री द्वारा निःसृत 'श्रीभागवत-कथा' (फरवरी १९८५) से संकलित

रास लीला में ऐसे अद्भुत रस का प्राकट्य हुआ कि प्रकट लीला में अप्राकृत रस की अनुभूति कराकर योगमाया ने सब कार्यों का संतुलन बनाये रखा । इसीलिए सर्वप्रथम रास लीला के आरम्भ में ही शुकदेवजी ने कहा – **"योगमायामुपाश्रितः"** अर्थात् सारा कार्य इस रास लीला में योगमाया ने ही किया। प्राकृत राज्य में अप्राकृत वस्तु के अवतरण का कार्य कराने वाली योगमाया है, उसी रास के प्रारम्भ में ही श्यामसुन्दर ने आराधना की और उसी के आधार पर ही सारी रास लीला चली।

लिम्पन्त्यः प्रमृजन्त्योऽन्या.....।

(श्रीभागवतजी १०/२९/७)

कोई गोपी घर को लीप रही थी, कोई गोपी अपने शरीर में उबटन लगा रही थी। कोई आँखों में अंजन लगा रही थी। श्यामसुन्दर की वंशी ध्वनि सुनकर अंजन कहीं का कहीं लगा लिया और अटपटा श्रृंगार कर लिया । वस्त्र उलटे पहन लिए। ऊपर के पहनने वाले वस्त्र नीचे पहन लिए तथा नीचे पहनने वाले वस्त्र ऊपर पहन लिए। आभूषण भी उलटे-पलटे पहन लिए। नथ को कानों में पहन लिया, कमर की करधनी को गले में पहन लिया, गले की माला को करधनी की जगह लपेट लिया। वंशी ध्वनि को सुनकर गोपिकायें कृष्णमयी हो गयीं, क्या करना है, कैसे करना है, इस बात का उन्हें बिल्कुल भी अनुसन्धान नहीं रहा और वे श्रीकृष्ण से मिलने के लिए चल पड़ीं। कुछ गोपियों के पतियों ने उनको रोका, पिताओं ने अपनी कन्याओं को रोका, भाइयों ने अपनी बहनों को रोका किन्तु गोविन्द ने उनके मन का इस प्रकार हरण कर लिया था कि वे लौटी नहीं, जिस प्रकार आकाश में पक्षी उड़ते जा रहे हों, उनको कोई रोकने वाला नहीं होता, इसी प्रकार रोकने पर भी गोपियाँ नहीं रुकीं ।

नाद अमृत को पन्थ रंगीलो सूक्षम भारी
तेहि मग ब्रज तिय चलैं, आन नहि कोऊ अधिकारी ।

यह नाद अमृत का पंथ है, बहुत रंगीला और सूक्ष्म पंथ है, इस पर केवल ब्रजदेवियाँ ही चल सकतीं हैं, अन्य कोई नहीं चल सकता। इसलिए रोकने पर भी वे रुकीं नहीं और सीधे कृष्ण के पास चलती चलीं गयीं। कुछ गोपियाँ ऐसी थीं, जो रास में नहीं जा पायीं । उनके पतियों ने उन्हें रोक दिया और कमरे में ताला लगाकर बंद कर दिया। यहाँ शुकदेव जी कहते हैं कि सबसे बड़ी चीज है भावना, जो श्रीकृष्ण से मिला देती है। रोक दिया तो रोक लो। यह लीला भी भगवान् दिखा रहे हैं अर्थात् सब रसों का संकलन ही महारास है। कृष्ण का परोक्ष मिलन, कृष्ण का अपरोक्ष मिलन, परोक्ष गमन, अपरोक्ष गमन – ये सब रास की अनेक विधायें हैं। जब गोपियों को रोक दिया गया तो यह भी लीला है। अब देखो, भावना शक्ति का अद्भुत चमत्कार है। लोगों ने लिखा है कि परकीया रस में बहुत उत्कंठा, बड़ी तीव्रता होती है। प्रेम वही है, जो कसौटी को पार कर ले। इसमें परकीया रस की बड़ी प्रशंसा की गयी है। परकीया कोई नहीं है, परकीया भाव है। ब्रज में परकीया कोई है ही नहीं। सब गोपियों के श्रीकृष्ण ही कान्त हैं। इसलिए परकीया भाव लिया गया है। लोग शंका इसलिए करते हैं क्योंकि गोपियों को परकीया समझते हैं, परकीया नहीं यहाँ 'परकीयात्व' है । परकीया और परकीयात्व में अंतर है। जिन गोपियों को रोक लिया गया, उन्होंने अपने अंतःकरण में श्रीकृष्ण की भावना की; ऐसा लौकिक नायिका नहीं कर सकती है । इन गोपियों ने श्रीकृष्ण की भावना करके अपने नेत्र बंद कर लिए और उन्होंने श्यामसुंदर से मिलने की साधन प्रक्रिया दिखाई।

दुःसहप्रेष्ठविरहतीव्रतापधुताशुभाः ।
ध्यानप्राप्ताच्युताश्लेषनिर्वृत्या क्षीणमङ्गलाः ॥

(श्रीभागवतजी १०/२९/१०)

'श्रीकृष्ण-रति' से जीव जितनी जल्दी शुद्ध हो जाता है और प्रभु से मिल सकता है, वैसा और कोई मार्ग नहीं है। जब साधक श्रीकृष्ण से मिलने के लिए रोता है, उस समय जो आँसू गिरते हैं, उससे उसके सारे पाप जलते हैं; यह सबसे सुन्दर उपाय है, इसका नाम है - प्रेमयोग। बड़े-बड़े ज्ञानी लोग हजारों-लाखों वर्षों तक योग साधना करके

समाधि लगाते हैं तथा योगाग्नि से अपने पञ्च कोश को जलाते हैं; प्रेममार्ग में तो वह एक क्षण में ही हो जाता है। श्रीकृष्ण के ध्यानजनित आनन्द से सकाम पुण्य नष्ट हो जाते हैं, **'क्षीणमङ्गलाः'** ये कौन-से पुण्य हैं, ये वे पुण्य हैं, जो हम सकाम भाव से करते हैं; भगवान् की प्रीति के लिए जो पुण्य किया जाता है, वह अलग होता है।

पुण्य भी दो प्रकार के होते हैं –

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।

कर्मफल का आश्रय लेकर जो कर्म किया जाता है, वह भी पुण्य है तथा कर्मफल का आश्रय न लेकर जो पुण्य किया जाता है, वह भी पुण्य है परन्तु दोनों में बड़ा भेद है। जब गोपियों ने श्रीकृष्ण की भावना करके अपने नेत्र बंद कर लिए तब श्रीकृष्ण के विरह की तीव्र वेदना से उनके हृदय में इतनी जलन हुई कि उनके सारे अशुभ संस्कार जल गये, इसके बाद ध्यान में उनके सामने भगवान् श्रीकृष्ण प्रकट हुए, उन्होंने बड़े प्रेम से उनका आलिंगन किया। उस समय गोपियों को इतना आनन्द मिला कि उनके सारे पुण्य के संस्कार नष्ट हो गये –

जहुर्गुणमयं देहं सद्यः प्रक्षीणबन्धनाः।

(श्रीभागवतजी १०/२९/११)

इस प्रकार गोपियों ने अपने गुणमय शरीर का त्याग कर दिया। अब यहाँ पर आचार्यों ने एक रहस्य खोला है; (श्रीमद्भागवत का अपने मन से अर्थ नहीं करना चाहिए, संत-महापुरुषों ने कहा है कि भागवत के टीकाकार आचार्यों की शैली से भागवत के अर्थ को समझो।)

अस्तु, पूर्व लीला प्रसंग को देखो, अब यहाँ विरोध आ गया; स्थूल शरीर के भीतर गुणमय शरीर होता है, जिसे लिंग शरीर कहते हैं; शंका होती है कि गोपियों ने 'लिंग शरीर' कैसे छोड़ दिया क्योंकि वहाँ लिंग-शरीर तो था ही नहीं। क्योंकि गोपियों के बारे में पहले ही बताया जा चुका है कि वे मानुषी नहीं थीं, उनके शरीर तो सर्वथा अप्राकृत थे। जब उनके शरीर अप्राकृत थे तो फिर उनमें लिंग शरीर कहाँ से आ गये ? लिंग शरीर तो भीतर की वस्तु है, उसके ऊपर प्राकृत शरीर का चोला होता है और जब तक लिंग शरीर है तब तक जीव कृष्ण से नहीं मिल सकता है और गोपियाँ तो रास में कृष्ण से मिलने के लक्ष्य से जा रहीं हैं, जिस रस को लक्ष्मीजी भी नहीं प्राप्त कर सकीं; जब उस दिव्यातिदिव्य रस को प्राप्त करने गोपियाँ जा रहीं हैं तो उनमें गुणमय शरीर कहाँ से रहा ? यह तो विरोध आ गया, इस विरोध का उत्तर आचार्य लोग देते हैं - **"जहुर्गुणमयं देहम्"** शरीर तीन होते हैं - एक स्थूल शरीर, एक सूक्ष्म शरीर और एक कारण शरीर। बहुत से लोग दो शरीर मानते हैं। वेदान्ती लोग तीन शरीर मानते हैं, सांख्य शास्त्र वाले दो शरीर मानते हैं - स्थूल और सूक्ष्म। लेकिन दो शरीर मानो तो भी वही बात है और तीन शरीर मानो तब भी वही बात है। जैसे सांख्यशास्त्र वाले मानते हैं कि केवल सूक्ष्म शरीर होता है; सूक्ष्म शरीर के भीतर वे आठ भाव मानते हैं – ज्ञान, अज्ञान, ऐश्वर्य, अनैश्वर्य, धर्म, अधर्म इत्यादि; इस प्रकार आठ भावों को वे सूक्ष्म शरीर के ही अन्तर्भूत कर लेते हैं तथा वेदान्ती लोग इन भावों को अलग कारण शरीर मानते हैं। 'बात वही हो गयी, चाहे सूक्ष्म शरीर के भीतर भावों को मानो, चाहे उन्हें अलग से मानो' अर्थात् हमारी जो भावना है, यही एक शरीर है तथा मुख्य शरीर है। स्थूल शरीर तो बहुत पीछे की बात है, सूक्ष्म शरीर से भी अधिक महत्वपूर्ण है 'कारण शरीर' यानि भावनामय शरीर। अतः 'जहुर्गुणमयं देहम्' से मतलब है कि गोपियों का जो विरह-भावनामय वपु था, उसे गोपियों ने छोड़ दिया अर्थात् विरह की भावनायें छूट गयीं। इसी प्रकार प्रकट लीला में बाधक जितने बंधन थे, वे सब भी नष्ट हो गये; ऐसा आचार्यों ने लिखा है।

भगवान् का अवतार वस्तुतः मनुष्यों के निःश्रेयस (कल्याण) के लिए होता है। भगवान् की पराभक्ति ही सच्चा निःश्रेयस है, जिस रसरूपा भक्ति को भगवान् ने कृष्णावतार में बहाया, उसी से मनुष्य का परम कल्याण हो सकता है।

"रसं ह्येवायं लब्ध्वा आनन्दीभवति।"

सच्चा निःश्रेयस (परम कल्याण) यही है कि जीव रस को प्राप्त करे, उसे श्रीकृष्ण रस मिले; जो वेद-शास्त्रों में लिखा है, वही है सच्चा मंगलकारी मार्ग। अस्तु, गोपिकायें महारास में पहुँच गयीं।

समस्त समस्याओं का समाधान – 'श्रीभगवन्नाम-संकीर्तन'

वर्तमानकाल को कलियुग कहा जाता है। चार युग हैं – सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग; जिनमें कलियुग सबसे अन्तिम, सबसे कम अवधि का परन्तु सबसे भयावह युग है। सनातन धर्म के सभी शास्त्रों में, पुराणों में, रामायण आदि में कलियुग की भयावहता का उल्लेख किया गया है। श्रीमद्भागवत के सबसे अन्तिम द्वादश स्कन्ध में परमहंस शिरोमणि श्रीशुकदेवजीमहाराज ने विस्तार से कलियुग के लक्षणों का वर्णन किया है, उनके मुख से कलियुग की भीषण करालता का वर्णन सुनकर परीक्षितजी चिन्तित हो उठे और शुकदेवजी से प्रश्न किया कि कलियुग में तो मुझे दोष ही दोष दिखायी पड़ते हैं, ऐसी स्थिति में उस युग के मनुष्यों का कल्याण कैसे होगा ? परीक्षितजी की बात सुनकर शुकदेवजी ने कहा –

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः ।
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसङ्गः परं व्रजेत् ॥

(श्रीभागवतजी १२/३/५१)

यद्यपि यह कलियुग दोषों का खजाना है किन्तु फिर भी इसमें एक बहुत बड़ा गुण है कि इस युग में केवल भगवान् श्रीकृष्ण का संकीर्तन करने मात्र से ही सारी आसक्तियाँ छूट जाती हैं और भगवान् की प्राप्ति हो जाती है। अतः कलियुग के दोषों से घबराओ नहीं। नाम-कीर्तन के प्रभाव से इस युग में अन्य युगों से भी सुन्दर गति प्राप्त हो जाएगी क्योंकि –

कृते यद् ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः ।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात् ॥

(श्रीभागवतजी १२/३/५२)

पद्म पुराणोक्त भागवत माहात्म्य के अनुसार नारदजी ने भक्ति महारानी से कहा – 'हे देवि ! राजा परीक्षित भ्रमर के समान सारग्राही थे, उन्होंने कलियुग को इसीलिए नहीं मारा क्योंकि –

यत्फलं नास्ति तपसा न योगेन समाधिना ।
तत्फलं लभते सम्यक्कलौ केशव कीर्तनात् ॥

(भागवतमाहात्म्य १/६८)

जो फल तपस्या करने से नहीं मिलता, योग करने से नहीं मिलता, समाधि से नहीं मिलता, वह फल कलियुग में भगवान् के नाम का कीर्तन करने से भलीभाँति मिल जाता है।'

'कलि' शब्द का अर्थ है कलह अथवा लड़ाई-झगड़ा। इसीलिए कलिकाल के प्रभाव से दुनिया में आज चारों ओर कलह और अशान्ति का ही बोलबाला है। दुनिया में जहाँ भी देखो, सर्वत्र कोरोना जैसी भीषण महामारी फैली हुई है, इस्लामी-कट्टरता के कारण आतंकवाद मानवता के लिए बहुत बड़ा खतरा बना हुआ है। इसी प्रकार एक और भीषण समस्या के रूप में आज रूस और यूक्रेन जैसे देशों के मध्य कई दिनों से भयंकर युद्ध हो रहा है, जिसके किसी भी समय तृतीय विश्व युद्ध के रूप में बदलने की प्रबल सम्भावना बनी हुई है; इस युद्ध में हजारों लोगों की मृत्यु हो चुकी है, हजारों लोग अपना घर छोड़कर शरणार्थी बनकर दूसरे देशों में आश्रय की तलाश में भटक रहे हैं। युद्ध में जान-माल की प्रतिदिन ही भयानक क्षति हो रही है। यहाँ तक कि ऐटमी हमले की धमकी दिए जाने से दुनिया के सामने भयंकर परमाणु युद्ध का खतरा भी दिखायी दे रहा है। हमारे देश भारत में तो इस्लामिक जेहादी हिन्दुओं के सामने प्रतिदिन नयी-नयी समस्यायें उत्पन्न कर रहे हैं। इन बर्बर नर पिशाचों ने सन् १९९० में कश्मीर में हजारों हिन्दुओं का इतना भयंकर सामूहिक नरसंहार किया कि जिसकी आधुनिक विश्व में कोई मिसाल देखने को नहीं मिलती। उस समय पाँच लाख कश्मीरी पण्डितों को अपना घर-बार छोड़कर पलायन करने के लिए बाध्य होना पड़ा और आज तक वे अपने देश भारत के ही विभिन्न राज्यों में शरणार्थी बनकर दुःखद जीवन व्यतीत कर रहे हैं। हिन्दू बहुसंख्यक कहे जाने वाले भारतवर्ष में मुसलमानों के द्वारा हिन्दुओं की क्रूरतापूर्वक हत्यायें की गयीं, बच्चों तक को बुरी तरह मारा गया, महिलाओं के साथ बलात्कार करके बर्बरतापूर्वक उनकी हत्या कर दी गयी। बहुसंख्यक समाज के साथ अपने ही देश में हुए ऐसे भीषण हत्याकाण्ड

और उन पर हुए नारकीय अत्याचारों का दुनिया में यह पहला ही उदाहरण है। ऐसी घटना आज तक दुनिया में कभी नहीं घटित हुई और बड़े ही दुःख की बात है कि कश्मीरी हिन्दुओं के क्रूर इस्लामी हत्यारों को आज तक कोई सजा मिलना तो दूर रहा, उल्टे इन हत्यारों को तत्कालीन प्रधानमंत्री के द्वारा दिल्ली में अपने आवास स्थल पर सम्मानित किया गया, देश के मीडिया तक ने ३२ साल तक कश्मीरी हिन्दुओं के साथ हुए इस भीषण अत्याचार को छुपाकर रखा और इन आतंकवादियों को हीरो की तरह प्रस्तुत किया। हाल ही में कश्मीरी पण्डितों के नरसंहार के सम्बन्ध में एक फिल्म बनी है – 'कश्मीर फाइल्स'। इसमें पूर्ण तथ्यों के आधार पर कश्मीरी हिन्दुओं के ऊपर अपनी ही जन्मभूमि में इस्लाम के अनुयायी क्रूर राक्षसों के द्वारा जो भयानक अत्याचार किये गये, उनका वास्तविक चित्रण किया गया है। हाल ही में भारतवर्ष में यह फिल्म रिलीज की गयी है और इसे देखने के लिए पूरे देश के सिनेमाघरों में लोगों की अपार भीड़ उमड़ रही है। लोग आश्चर्यचकित हैं कि सन् १९९० में इन कश्मीरी हिन्दुओं को इतनी निर्ममतापूर्वक मारा गया और देश की जनता से इस भयावह घटना को कितनी चालाकी के साथ छुपाकर रखा गया। देश के लोगों को इसका कोई पता ही नहीं लग सका। कश्मीरी हिन्दुओं की इस भीषण त्रासदी ने लोगों के हृदय को झकझोर कर रख दिया है। इस फिल्म को देखने के बाद लोग बुरी तरह रो रहे हैं, सबसे अच्छी बात यह हुई है कि इस फिल्म ने देश के हिन्दुओं में एक अभूतपूर्व जाग्रति उत्पन्न कर दी है। फिल्म को देखने के बाद लोग सिनेमाघरों में ही 'जय श्री राम, भारत माता की जय और वन्दे मातरम्' के नारे लगा रहे हैं। इतना सब कुछ होने पर अभी भी मुस्लिम प्रेमी और हिन्दुओं के शत्रु देश विरोधी टुकड़े-टुकड़े गैंग के सदस्यों के रूप में देश की विपक्षी पार्टियों के नेता, पत्रकार, हिंदी फिल्म उद्योग के जेहादी मानसिकता के कलाकार और कुछ तथाकथित बुद्धिजीवी इस फिल्म का विरोध कर रहे हैं, इनमें से बहुतों ने तो भरसक प्रयास किया कि यह फिल्म रिलीज ही न हो सके परन्तु इनके सारे षडयंत्र विफल सिद्ध हुए और इस फिल्म को देश की जनता का भरपूर समर्थन मिल रहा है। आर्थिक रूप से भी थोड़े ही दिनों में इस फिल्म ने अपनी कमाई से अब तक की बड़ी-बड़ी फिल्मों को धूल चटा दी और दस दिनों में ही सौ करोड़ रुपये की अपार धनराशि अर्जित कर ली। इस फिल्म को देखने से पता चलता है कि अपने ही देश भारत में हिन्दुओं की कितनी दयनीय दशा है और आज भी मुस्लिम नरपिशाच किस प्रकार उन पर भीषण अत्याचार कर रहे हैं। इन दुर्दान्त अपराधियों को किस प्रकार देश की राजनीतिक पार्टियों, मीडिया के एक वर्ग और तथाकथित बुद्धिजीवियों का भरपूर समर्थन प्राप्त है। यहाँ तक कि देश की न्याय व्यवस्था असफल सिद्ध हो गयी है। इससे बड़ी त्रासदी और क्या होगी कि दुनिया के एकमात्र हिन्दू बहुल देश में मुस्लिम आक्रान्ताओं के द्वारा हजारों मंदिरों को ध्वस्त कर दिया गया और इनके पुनर्निर्माण के लिए हिन्दुओं को मुस्लिम जेहादियों की हठधर्मिता, न्याय तन्त्र की विफलता और विपक्षी राजनीतिक पार्टियों द्वारा वोट बैंक बने मुस्लिम समुदाय को दिए जाने वाले समर्थन के कारण लम्बे समय तक संघर्ष करना पड़ रहा है। दीर्घकालिक संघर्ष और हजारों हिन्दुओं के बलिदान के पश्चात् फ़िलहाल अब देश के गौरवशाली प्रधानमन्त्री श्रीनरेंद्र मोदी और उत्तर प्रदेश के यशस्वी मुख्यमन्त्री श्रीआदित्यनाथ योगीजी के नेतृत्त्व में अयोध्या में भगवान् राम के मंदिर और काशी विश्वनाथ मन्दिर के निर्माण में सफलता प्राप्त हो रही है परन्तु मथुरा की श्रीकृष्ण जन्म भूमि अभी भी मुस्लिम आक्रान्ताओं की कैद में है। आज के स्वतन्त्र भारत में भी मुस्लिम आक्रान्ताओं द्वारा हिन्दू समाज पर आये दिन हमले होते रहते हैं और लोकतान्त्रिक तथा धर्मनिरपेक्ष राज्य व्यवस्था होने के कारण सरकार के हाथ बँधे हुए हैं। इसलिए वह चाहकर भी हिन्दू व देश विरोधी इस बर्बर समुदाय पर कठोर दण्डात्मक कार्यवाही नहीं कर पाती है। हिन्दुओं की जनसंख्या तेजी से घट रही है जबकि मुस्लिम आबादी तेजी से वृद्धि की ओर अग्रसर है। लोकतान्त्रिक व्यवस्था होने के कारण जेहादी वर्ग अपनी आबादी को इस आशा से बढ़ा रहा है कि एक दिन हमारी संख्या हिन्दुओं से अधिक हो जाएगी तो हम लोग इस देश पर फिर से शासन करेंगे तथा हिन्दू समाज को पूर्ण नियन्त्रण में लेकर उसे मुस्लिम बना देंगे, जो ऐसा नहीं करेंगे, उन्हें मौत के घाट उतार दिया जायेगा एवं इस प्रकार भारत को एक इस्लामिक राष्ट्र के रूप

में स्थापित कर दिया जाएगा। मुस्लिम कट्टरपंथियों के द्वारा हिन्दू समाज के सामने चुनौती बनी इन सब विकराल परिस्थितियों और देश-विदेश में कोरोना जैसी महामारी के प्रकोप और तृतीय विश्व युद्ध की आहट को देखते हुए हमें यह गहन चिन्तन करना होगा कि इन विकराल समस्याओं का समाधान क्या है ? दुनिया की जलवायु में भी तेजी से परिवर्तन हो रहा है, जिसके कारण हाल ही में भारत और विदेशों में सर्दी की ऋतु में भी भीषण वर्षा हुई, नदियों में भयंकर बाढ़ आ जाने से जान और माल की व्यापक क्षति हुई। इसके साथ ही मार्च के महीने के अन्तिम चरण में देश के कुछ राज्यों और दिल्ली में तापमान ४० डिग्री तक पहुँच गया और मार्च के महीने में ही लोगों को मई-जून की भीषण तपिश का सामना करना पड़ा। इसका कारण वैज्ञानिक लोग यह बता रहे हैं कि पृथ्वी के दक्षिणी ध्रुव पर स्थित अन्टार्कटिक महाद्वीप, जो चारों तरफ से सदा बर्फ से ही आच्छादित रहता है, वहाँ का तापमान तेजी से बढ़ रहा है और वहाँ बर्फ भी तेजी से पिघल रही है। इसीलिए मार्च के महीने में ही शेष विश्व के तापमान में भी वृद्धि होने से मार्च के अंतिम चरण में ही गर्मी बढ़ गयी है। इसी प्रकार भारत में भी उत्तराखण्ड में हिमालय के ग्लेशियर (हिमखण्ड) तेजी से पिघल रहे हैं। ग्लेशियर बनने से ही नदियों का निर्माण होने से मानव-जाति को पीने और खेतों की सिंचाई तथा अन्य कार्यों के लिए बहुउपयोगी अपार जलराशि की उपलब्धि होती है। यदि हिमालय के ग्लेशियर तेजी से पिघलते रहे तो देश की नदियों में पानी नहीं रहेगा, नदियाँ सूख जाएँगी और मनुष्य के जीवन के लिए बहुत बड़ा संकट खड़ा हो जायेगा। इस तरह देखा जाए तो सम्पूर्ण दुनिया विशेषकर हमारे देश के सम्मुख अनेकानेक विकराल समस्यायें सुरसा के समान मुख फाड़कर खड़ी हुई हैं और वैज्ञानिकों तथा राजनेताओं के पास इन आपदाओं से निपटने का कोई हल नहीं है। प्रश्न उठता है कि इन अपरिहार्य समस्याओं का समाधान क्या है ? हमारे शास्त्रों जैसे श्रीमद्भागवत और रामायण इत्यादि में तो इन समस्याओं के बारे में पहले ही भविष्यवाणी कर दी गयी है तथा इनका समाधान भी इन शास्त्रों में बता दिया गया है। जैसे कि पहले ही वर्णन हो चुका है कि श्रीशुकदेवजी ने भागवत में कलियुग की समस्त समस्याओं का एकमात्र समाधान हरिनाम संकीर्तन को बताया है। अतः हमें अपने शास्त्रों और संत- महापुरुषों के वचनों पर आस्था रखकर हरिनाम-संकीर्तन व उसकी महिमा का प्रचार-प्रसार करते हुए अपने और समाज-कल्याण के पुनीत कार्य में संलग्न हो जाना चाहिए। त्रिलोकी में भीषण समस्यायें तो सृष्टि के प्रारम्भ से ही जीवों के साथ जुड़ी हुई हैं। पुराणों में वर्णन है कि देवासुर संग्राम में असुरों द्वारा देवताओं की बार-बार पराजय होने पर भगवान् ने देवताओं से कहा कि तुम लोग दानवों को साथ लेकर समुद्र का मन्थन करो, ऐसा करने पर समुद्र से अमृत की उत्पत्ति होगी, उसे तुम लोग असुरों को न देकर स्वयं ही यदि पी लोगे तो अमर हो जाओगे और फिर असुरों के द्वारा तुम्हारी कभी पराजय नहीं होगी। भगवान् के आदेश से देवताओं ने दानवों के साथ मिलकर मन्दराचल पर्वत की मथानी बनाकर समुद्र- मन्थन का कार्य प्रारम्भ किया तो उसमें सबसे पहले समुद्र से भयंकर कालकूट विष उत्पन्न हुआ, यह भयानक विष अपनी तीक्ष्ण ज्वाला के साथ त्रिलोकी को जलाने लगा, इससे बचने के लिए सभी देवता महादेवजी की शरण में गये और कालकूट विष से बचाने की प्रार्थना की। त्रिलोकी के जीवों के सामने उपस्थित हुई इस भीषण विपदा को देखकर शिवजी का हृदय करुणा से द्रवित हो गया और उन्होंने अपनी हथेली पर कालकूट जहर को रखा और भगवान् के नाम का उच्चारण करके वे इस भयंकर विष का पान कर गये। गोस्वामी तुलसीदासजी ने रामायण में लिखा है – **नाम प्रभाउ जान सिव नीको।**

कालकूट फलु दीन्ह अमी को॥

(श्रीरामचरितमानसजी, बालकाण्ड -१९)

वैष्णवों में अग्रगण्य देवाधिदेव भगवान् शंकर भगवन्नाम की अनन्त महिमा को जानते हैं, अतः उन्होंने नाम के ही प्रभाव से कालकूट विष को पी लिया, इस भयंकर विष ने महादेवजी को कोई क्षति नहीं पहुँचायी अपितु भगवान् के नाम के प्रभाव से कालकूट ने उन्हें अमृत का फल दिया। इसीलिए वर्तमान युग की भी विषम से विषम परिस्थितियों का निराकरण करने के लिए हम लोगों को भगवन्नाम-कीर्तन का सरल व सरस साधन अपनाना चाहिए, जिससे चराचर सृष्टि का परम कल्याण सहज ही हो जाता है।

परम करुणामय 'श्रीमहाप्रभु-परिकर'

श्रीमद्भागवतजी में शौनकजी ने कहा है –

आपन्नः संसृतिं घोरां यन्नाम विवशो गृणन् ।
ततः सद्यो विमुच्येत यद्बिभेति स्वयं भयम् ।।

(श्रीभागवतजी १/१/१४)

भयानक भवबन्धन में बँधा जीव यदि विवश होकर भी भगवान् का नाम ले ले तो वह उसी समय विमुक्त हो जाएगा अर्थात् भगवान् को प्राप्त हो जायेगा क्योंकि स्वयं भय भी भगवान् से भयभीत रहता है।

श्रीमैत्रेयजी ने कहा है –

अशेषसंक्लेशशमं विधत्ते गुणानुवाद श्रवणं मुरारेः ।।

(श्रीभागवतजी ३/७/१४)

भगवान् के गुणों का गान अर्थात् संकीर्तन करने एवं उसका श्रवण करने से सभी प्रकार के दुःख समूल नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार श्रीमद्भागवत में धर्मराज ने अजामिल के प्रसंग में कहा है –

तस्मात् सङ्कीर्तनं विष्णोर्जगन्मङ्गलमंहसाम् ।।

(श्रीभागवतजी ६/३/३१)

भगवान् के संकीर्तन से सारे विश्व का मंगल होता है।

आज विश्व में चारों ओर अशान्ति फैली हुई है। युद्ध, महामारी, आतंकवाद और जलवायु में परिवर्तन तथा अनेकानेक संकट मानवजाति को चारों ओर से घेरे हुए हैं; आर्थिक समृद्धि और वैज्ञानिकी भौतिक विकास से इन समस्याओं का कोई हल नहीं निकल सकता, यह सभी को प्रत्यक्ष दिखायी दे रहा है; इन समस्याओं का तो एक ही हल है - नाम संकीर्तन और जैसा कि धर्मराज ने भागवत में घोषणा कर दी है कि इसी साधन के द्वारा विश्व का मंगल हो सकता है। इसलिए हम लोगों को सम्पूर्ण विश्व के कल्याण को ध्यान में रखकर ऐसे ही सर्वमंगलकारी साधन का पूरे देश में प्रचार करना चाहिए क्योंकि भगवन्नाम ही सबसे बड़ा बल है।

गौरांग महाप्रभु का अवतार प्रेमावतार कहलाता है, उन्होंने जब अवतार ग्रहण किया, उस समय पूरे बंगाल में क्रूर मुस्लिम शासकों का शासन था, वे लोग हिन्दू समाज पर भीषण अत्याचार कर रहे थे, उनको पराजित करने के लिए महाप्रभु ने ऐसी लड़ाई लड़ी कि जिसे समझना बहुत कठिन है, सच्चे संत उसी लड़ाई को लड़ते हैं। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने बर्बर मुस्लिम शासकों के प्रहार से हिन्दू समाज को बचाने के लिए नगर-कीर्तन के माध्यम से बंगाल और सम्पूर्ण भारत में भगवन्नाम का प्रचार किया, उन्होंने अपने भक्तों की एक कीर्तन मण्डली बनायी, जिसको साथ लेकर वे नगर कीर्तन किया करते थे, वे अपनी कीर्तन मण्डली के प्रचारकों को स्थान-स्थान पर नगर-कीर्तन करने भेजा करते थे; श्रीमहाप्रभुजी ने इन भक्तों से कहा कि तुम लोग घर-घर में जाकर विनम्रतापूर्वक लोगों के चरण-स्पर्श करके उनसे भगवन्नाम की भिक्षा माँगो।

प्रति घरे जाओ, करो यही भिक्षा।
बोलो कृष्ण भजो कृष्ण, करो कृष्ण शिक्षा ।।

महाप्रभु की आज्ञा से भक्तजन गली-गली में जाकर नगर-कीर्तन करते और लोगों के चरणस्पर्श करके उनसे नाम-कीर्तन करने की भिक्षा माँगते थे; इसका यह प्रभाव हुआ कि नवद्वीप में घर-घर में कीर्तन होने लगा। महाप्रभुजी की इस प्रचार मण्डली के मुखिया थे – नामाचार्य श्रीहरिदास ठाकुरजी एवं श्रीनित्यानन्द महाप्रभुजी; ये दोनों महाप्रभु की आज्ञा से नवद्वीप-मायापुर में सर्वत्र नाम कीर्तन का प्रचार किया करते थे। नित्यानन्द महाप्रभु ने देखा कि उस समय नवद्वीप में दो भाई जगाई और मधाई दरोगा के पद पर नियुक्त थे, ये कहने को तो ब्राह्मण थे परन्तु अपने आचरणों से पूरे कसाई थे; ये दोनों भाई माँस-मदिरा का सेवन करने वाले और अत्यन्त क्रूर थे, नवद्वीप के सारे लोग इनसे भयभीत रहा करते थे। नित्यानन्द महाप्रभु ने इनकी ऐसी दशा देखी तो उन्होंने अपने मन में इनके उद्धार का दृढ़ निश्चय कर लिया। नित्यानन्दजी पूर्ण निर्भयता के साथ नाम- कीर्तन करते हुए एक बार जगाई-मधाई के पास पहुँच गये; उस समय इन दोनों भाइयों ने मदिरा पी रखी थी और मदिरा के नशे में ये चूर थे, उसी समय नित्यानन्दजी ने इनके पास जाकर कहा – 'अरे जगाई, हरि बोल ! ओ मधाई, हरि

बोल !!' नित्यानन्दजी के मुख से 'हरि बोल' शब्द सुनकर ये दोनों भाई क्रोधित हो गये और इनसे भाग जाने के लिए कहा परन्तु नित्यानन्दजी कहाँ जाने वाले थे, वे तो आज इन दोनों भाइयों के उद्धार का दृढ़ संकल्प लेकर ही इनके पास आये थे। अतः उन्होंने कहा – 'अरे जगाई, एक बार मुख से कहो 'हरि बोल !' अरे मधाई, तुम भी कहो 'हरि बोल !!' जगाई-मधाई बार-बार नित्यानन्दजी से भाग जाने के लिए कहते परन्तु वे तो उनके सामने जोर-जोर से कीर्तन करने लगे। उनको ऐसा करते देख मधाई बहुत अधिक क्रोधित हुआ और उसने क्रोधावेश में भरकर मदिरा की बोतल द्वारा नित्यानन्द महाप्रभु के मस्तक पर जोर से प्रहार किया। काँच की बोतल के प्रबल आघात से नित्यानन्दजी का मस्तक फट गया और उससे रक्त की स्थूल धारा बहने लगी। इतना कठोर अत्याचार करने पर भी नित्यानन्दजी मधाई पर क्रोधित होना तो दूर अपितु उसके कल्याण हेतु करुणापूर्वक उससे कहने लगे – 'अरे मधाई ! भले ही तुम मुझे जान से मार डालो परन्तु एक बार अपने मुख से कहो – "हरि बोल ! हरि बोल !! हरे कृष्ण ! हरे राम !!"

चैतन्य महाप्रभु के अन्य भक्तों ने जब यह घटना देखी तो उन्होंने तुरन्त ही उनके पास जाकर इसकी सूचना दी। जगाई-मधाई द्वारा नित्यानन्दजी के प्रति किये गये इस जघन्य अपराध का समाचार सुनते ही वे क्रोध से भर गये और दौड़ते हुए घटना स्थल पर पहुँचे। महाप्रभु ने देखा कि नित्यानन्दजी के मस्तक से रक्त की धारा बह रही है और फिर भी अत्यन्त करुणा से भरकर वे जगाई-मधाई के कल्याण के लिए उनसे 'हरिनाम' उच्चारण करने की प्रार्थना कर रहे हैं। श्रीगौरांग महाप्रभु जगाई-मधाई के प्रति अत्यधिक क्रोध से भरकर उनका वध करने का निश्चय कर बोले – 'चक्र-चक्र।' सुदर्शन चक्र का आह्वान करते ही आसमान से करोड़ों सूर्य के समान प्रकाशमान सुदर्शन चक्र प्रकट हो गया। सुदर्शन चक्र से श्रीमहाप्रभुजी मधाई का गला काटने को जैसे ही उद्यत हुए कि नित्यानन्दजी ने तुरन्त ही उनके चरणों में गिरकर प्रार्थना की – 'प्रभो ! यह आप क्या कर रहे हैं ? इस समय पृथ्वी पर कलियुग का साम्राज्य है। इस युग के प्रभाव से सभी मनुष्य आसुरी स्वभाव को प्राप्त हो गये हैं। आपने अन्य युगों में असुरों के उद्धार के लिए अस्त्र का प्रयोग किया था किन्तु इस युग में तो सभी जीव असुर बन गये हैं। आप अस्त्रों के प्रहार से कहाँ तक इनका वध करेंगे ? इस युग में तो कलिमल ग्रसित इन जीवों का उद्धार आपको अस्त्र के द्वारा नहीं बल्कि अपनी करुणा के द्वारा करना है।' कलियुगी जीवों के प्रति प्रेम और करुणा भरे नित्यानन्द महाप्रभु के इन वचनों को सुनकर श्रीचैतन्यमहाप्रभु का क्रोध कपूर की भाँति उड़ गया। मधाई ने देखा कि श्रीचैतन्यमहाप्रभु तो भगवान् हैं, जो सुदर्शन चक्र लेकर मेरा वध करने जा रहे थे; अतः वह उनके चरणों में गिरकर क्षमा माँगने लगा। महाप्रभु ने उसे फटकारते हुए कहा – 'दुष्ट ! क्षमा माँगनी है तो इन करुणावान महापुरुष के चरणों में गिरकर क्षमा माँग, जिनका तूने अपराध किया और फिर भी वे तुझको मेरे दण्ड से बचा रहे हैं।' महाप्रभु की बात सुनकर मधाई नित्यानन्दजी के चरणों में गिर पड़ा। करुणासिंधु नित्यानन्द महाप्रभु ने मधाई को अपनी बाँहों में भरकर हृदय से लगा लिया, उनकी इस अपार करुणा के प्रभाव से महापातकी जगाई-मधाई का जीवन परिवर्तित हो गया, उन्हें अपने पापों का घोर पश्चात्ताप हुआ और आगे चलकर वे बहुत बड़े वैष्णव भक्त बने।

नामाचार्य श्रीहरिदासठाकुरजी ने भी अपनी महान करुणा के द्वारा अपने ऊपर प्रहार करने वाले क्रूर जल्लादों का उद्धार किया। श्रीहरिदासजी का जन्म मुस्लिम परिवार में हुआ था। बचपन में ही उनके माता-पिता की मृत्यु हो गयी थी और संतों की संगति के प्रभाव से हरिदासजी अपने घर से अलग होकर विरक्त हो गये थे तथा महाप्रभुचैतन्यदेव की छत्रछाया में रहकर वे उच्च स्वर से सदा हरिनाम कीर्तन किया करते थे। मुसलमानों को यह देखकर बहुत बुरा लगा कि एक मुस्लिम युवक हिन्दू धर्म अपनाकर उनके भगवान् का दिन-रात कीर्तन करता रहता है, उन्होंने हरिदासजी से हिन्दू धर्म त्यागकर इस्लाम धर्म को स्वीकार करने को कहा किन्तु हरिदासजी ने ऐसा करने से मना कर दिया। अंत में उनके

विरुद्ध न्यायालय में मुकदमा दर्ज हुआ । न्यायाधीश मुसलमान था, उसने भी हरिदासजी को हिन्दूधर्म के अनुसार जीवनयापन करते हुए हरिनाम कीर्तन करने को मना किया परन्तु हरिदासजी ने स्पष्ट मना कर दिया; ऐसा करने पर उन्हें कठोर दण्ड दिया गया। न्यायाधीश ने आदेश दिया कि हरिदास को २२ बाजारों में घुमाकर सबके सामने कोड़ों से इस प्रकार पीटा जाए कि इसकी मृत्यु हो जाए और लोगों में भय व्याप्त हो जाए। न्यायालय के आदेश से मुस्लिम जल्लाद 'हरिदासजी' को हथकड़ियों से बाँधकर उन्हें बाईस बाजारों में घुमाते हुए उनके कोमल शरीर पर कोड़ों से प्रहार करने लगे, कोड़े मारते हुए वे हरिदासजी से कहते थे – 'और कहेगा हरि बोल' । करुणामय हरिदासजी सोचते थे कि ये मुस्लिम जल्लाद कम से कम इसी बहाने अपने मुख से हरिनाम तो बोल रहे हैं, अतः वे उनसे कहते – 'हाँ भैया ! मुझे मार लो किन्तु अपने मुख से हरिनाम का उच्चारण करते रहो।' कोड़ों की मार से अंत में हरिदासजी मूर्च्छित हो गये तो इन जल्लादों ने उन्हें मृतक समझकर गंगाजी में फेंक दिया। थोड़ी देर में हरिदासजी को होश आ गया, वे तैरकर गंगाजी से बाहर निकल आये और चैतन्य महाप्रभुजी के पास पहुँचे । वहाँ जाकर उन्होंने देखा कि जल्लादों ने कोड़ों से उनके शरीर पर जो आघात किये थे, उसके चिह्न महाप्रभु की पीठ पर अंकित थे अर्थात् जल्लादों द्वारा हरिदासजी के शरीर पर किये गये कोड़ों के प्रहार को महाप्रभु ने अपनी पीठ पर सहन कर लिया था । इसी कारण कोड़ों के आघात से उत्पन्न हुए भयंकर कष्ट की हरिदासजी को जरा भी अनुभूति नहीं हुई और वे जीवित बने रहे । इस अद्भुत चमत्कार को देखकर वे जल्लाद अत्यन्त आश्चर्यचकित हुए और अंत में वे भी भक्त बन गये। इस प्रकार श्रीनित्यानन्दजी और श्रीहरिदासजी ने जिस प्रकार अपने प्राणों की परवाह न करते हुए पिट-पिटकर हरिनाम-कीर्तन का प्रचार किया, उसके प्रभाव से हजारों लोग वैष्णव भक्त बन गये; मुस्लिम आततायी उनका कुछ नहीं बिगाड़ सके। एकबार एक काजी ने वैष्णवों द्वारा किये जाने वाले कीर्तन का विरोध किया तो श्रीचैतन्यमहाप्रभु हजारों वैष्णवों के साथ तुमुल ध्वनि के साथ नगर कीर्तन करते हुए उस काजी के घर पहुँच गये। यह देखकर वह काजी डर गया और महाप्रभु के पास आकर प्रेम से बातें करने लगा। महाप्रभु ने भी उसे मामा कहकर सम्बोधित किया और उससे प्रेम से बात की। इस घटना के बाद से वह कट्टर काजी भी वैष्णव भक्त बन गया । श्रीचैतन्यमहाप्रभु सम्पूर्ण भारत में नगर-कीर्तन के माध्यम से हरिनाम का प्रचार किया करते थे। वे स्वयं कीर्तन में प्रेमावेश से भरकर नृत्य किया करते थे और कीर्तन करते हुए वे जिस किसी को भी प्रेम से आलिंगन कर लेते, वह भी कृष्ण-प्रेम से भरकर नाम-कीर्तन करते हुए नृत्य करने लगता था। इस प्रकार क्रूर अत्याचारी मुस्लिम शासन में भी हरिनाम-कीर्तन का व्यापक रूप से प्रचार करते हुए श्रीचैतन्यमहाप्रभु और उनके परिकरों ने भयभीत और दबे-कुचले हिन्दू-समाज के भय को दूर कर दिया और उन्हें वैष्णव बनाकर समाज में सर्वत्र आनन्द मंगल की स्थापना कर दी।

आज से ५००-६०० वर्ष पूर्व सम्पूर्ण भारत में दुर्दान्त मुस्लिम आतताइयों का ही शासन था और वे क्रूरतापूर्वक तलवार के बल पर हिन्दुओं को मुसलमान बना रहे थे, सनातन धर्म का समूल विनाश करने में लगे हुए थे, जो उनकी बात नहीं मानता उसको भयंकर नारकीय यातना देकर मृत्यु के घाट उतार देते थे; ऐसे भयंकर समय में सम्पूर्ण भारत में भगवान् की कृपा से भगवद्धाम से महान संत-भक्तजन अवतरित हुए और उन्होंने सारे देश में हरिनाम-कीर्तन के माध्यम से भक्ति का प्रचार किया, इसीलिए उस काल को भक्तियुग कहा जाता है।

सशक्त व सरस साधन 'श्रीहरिगुणगान'

विक्रम सम्वत् १२५६ में उत्तर भारत में स्वामी रामानन्दाचार्यजी प्रकट हुए, उन्होंने कलियुग को ही अपना शिष्य बनाकर सन्तों-वैष्णवों से दूर रहने का आदेश दिया; कलियुग ने उन्हें वचन दिया कि मैं सच्चे भक्तों के तो पास भी नहीं फटकूँगा परन्तु जो साधु-वैष्णव का वेष धारण करके पाखण्ड करेंगे, उन्हें मैं नहीं छोड़ूँगा। उस समय भारत में मुसलमानों का शासन था और वे सनातन धर्म का समूल नाश करने में लगे थे। स्वामी रामानन्दजी ने मुल्ला-मौलवियों और मुस्लिम बादशाहों के सामने चमत्कार दिखाकर उन्हें भयभीत कर दिया। घबराकर ये मुल्ला-मौलवी और मुस्लिम बादशाह रामानन्दजी के शरण में आये और अपने अपराधों के लिए क्षमा याचना करने लगे। स्वामीजी ने उनसे कठोरतापूर्वक कहा कि यदि पुनः तुम लोगों ने हिन्दू-समाज का उत्पीड़न किया तो इस्लाम सहित तुम सभी का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। इन लोगों ने स्वामीजी को आश्वासन दिया कि आज से हम लोग सनातन धर्म को कोई क्षति नहीं पहुँचायेंगे। इस प्रकार स्वामी रामानन्दजी के प्रभाव से मुस्लिम आततायियों ने हिन्दू-समाज पर अत्याचार करना बन्द कर दिया। स्वामीजी के शिष्य-प्रशिष्यों की बहुत बड़ी संख्या थी। इन सभी ने पूरे भारतवर्ष में हरिनाम-कीर्तन का प्रचार करके हिन्दू-समाज को इस्लाम के आतंक से मुक्त किया।

स्वामी रामानन्दजी के शिष्य श्रीकबीरदासजी के प्रभाव से उनसे ईर्ष्या करने वाले काशी के ब्राह्मणों ने क्रूर बादशाह सिकंदर लोदी से शिकायत कर दी। सिकन्दर लोदी बहुत क्रूर था, वह भारत से सनातन धर्म का पूर्णतया विनाश करने का संकल्प लेकर हिन्दुओं को मुस्लिम बनाने के अभियान में जुटा था और हिन्दुओं का बर्बरतापूर्वक दमन कर रहा था। उसने काशी में सबके सामने कबीरदासजी को गंगाजी में डुबाकर मार डालने का आदेश दिया किन्तु कबीरदासजी नहीं मरे। इसके बाद उसने उन्हें आग में जलाने का आदेश दिया तब भी वे बच गये और यह पद गाया –

हम न मरैं, मरिहै संसारा।
हमको मिला जियावनहारा।
शाकत मरैं संत जन जीवें,
भर-भर नाम रसायन पीवें॥

मैं नहीं मर सकता क्योंकि मुझे जीवनप्रदाता ईश्वर की प्राप्ति हो गयी है। जो शाक्त धर्म को पूजने वाले अर्थात् शक्ति की पूजा करने वाले भोग-ऐश्वर्य परायण लोग हैं, वे ही मरेंगे। जो संत-भक्त हरिनाम-रसायन का पान करते हैं, काल उनका कुछ नहीं बिगाड़ पायेगा। सिकंदर ने चिढ़कर अंत में पागल हिंसक हाथी के द्वारा कबीरदासजी को कुचलवाने का आदेश दिया। हाथी जैसे ही कबीरदासजी के निकट आता, भगवान् की लीला से उसे पर्वताकार भयंकर सिंह का दर्शन होता, उसे देखकर हाथी अपना बन्धन छुड़ाकर भाग गया। भगवान् ने भयानक सिंह का दर्शन सिकन्दर को भी कराया, उसे देखकर वह इतना अधिक भयभीत हुआ कि ऊँचे सिंहासन से नीचे कूद पड़ा और कबीरदासजी के चरणों में साष्टांग लोटकर अपने अपराधों के लिए क्षमा माँगने लगा। कबीरदासजी ने उससे कहा कि भविष्य में फिर कभी सनातन धर्म के अनुयायियों पर किसी प्रकार का अत्याचार मत करना नहीं तो अपने अनुयायियों सहित तुम्हारा विनाश हो जाएगा। कबीरदासजी के आदेश से सिकन्दर हिन्दू धर्म के प्रति अपने हिंसक अभियान से पीछे हट गया। संत कबीरदासजी ने भी नाम-कीर्तन का प्रचार करके सोये हुए हिन्दू-समाज को जाग्रत किया, उन्होंने कहा –

भजो रे भैया राम गोविन्द हरी।
जप तप साधन कछु नहिं लागत, खरचत नहिं गठरी॥

अरे भैया ! भगवान् के राम, गोविन्द, हरि आदि पावन नामों का गायन करो, इनका कीर्तन करो। नाम-कीर्तन रूपी रसमय साधन करने के लिए तुम्हें नीरस साधन जैसे जप-तप आदि करने की कोई आवश्यकता नहीं है। नाम-कीर्तन करने के लिए तुम्हें अपनी गठरी से एक पैसा भी खर्च नहीं करना पड़ेगा, यह तो निःशुल्क रसमय साधन है, जितना भी हरिनाम लूट सकते हो, लूट लो।

स्वामी रामानन्दजी की परम्परा में ही आगे चलकर गोस्वामी तुलसीदासजी प्रकट हुए, जिन्होंने रामचरितमानस की रचना करके पतनोन्मुख हिन्दू-समाज में विलक्षण क्रान्ति उत्पन्न कर दी। अपनी इस विलक्षण रचना से गोस्वामीजी ने सर्वत्र नाम की महिमा का ही उद्घोष किया –

कलियुग केवल नाम अधारा।
सुमिर सुमिर नर उतरहिं पारा॥

गोस्वामीजी ने कहा कि कलियुग से घबराओ नहीं क्योंकि इसके जैसा उत्तम युग कोई नहीं है –

कलिजुग सम जुग आन नहिं जौं नर कर बिस्वास।
गाइ राम गुन गन बिमल भव तर बिनहिं प्रयास॥

यदि विश्वास करो तो कलियुग के समान कोई युग नहीं है क्योंकि इसमें केवल भगवान् के पवित्र गुणों का गान करने अर्थात् कीर्तन करने से बिना किसी प्रयास, बिना किसी परिश्रम के ही मनुष्य भवसागर को पार कर जाएगा।

इसलिए कलियुग की विभीषिका को परास्त करने का एक ही उपाय है कि श्रीहरिगुणगान अर्थात् संकीर्तन रूपी साधन को अपनाकर सर्वत्र इसका प्रचार किया जाए। आगे उन्होंने कहा –

कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना।
एक अधार राम गुन गाना॥

कलियुग में न तो योग है, न ज्ञान है अर्थात् कलियुग में योग एवं ज्ञानमार्ग का अवलम्बन करके भवसागर को पार नहीं किया जा सकता। इस विकराल युग में तो एकमात्र आधार है हरिगुणगान अर्थात् आनन्द से कीर्तन करो और अत्यन्त सुगमतापूर्वक भव वैतरणी के पार उतर जाओ।

कलिजुग केवल हरि गुन गाहा।
गावत नर पावहिं भव थाहा॥

श्रीतुलसीदासजी ने यह भी बताया कि गान अथवा कीर्तन के अतिरिक्त अन्य साधनों को अपनाने से इस युग में कोई लाभ नहीं होता है।

एहिं कलिकाल न साधन दूजा।
जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा॥

इस कलिकाल में जीवों के कल्याण का अन्य कोई साधन नहीं है। योग, यज्ञ, तप, व्रत और यहाँ तक कि जप और पूजा से भी लाभ नहीं होगा। इतने बड़े-बड़े साधनों का खण्डन गोस्वामीजी ने कर दिया तो फिर इस युग में कौन-से साधन को अपनाया जाए तो इस पर उन्होंने कहा –

रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि॥

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड -१३०)

भगवान् का ही स्मरण करो और उन्हीं के यश को गाओ अर्थात् कीर्तन करो, इसी प्रकार निरन्तर भगवान् के यश का गान करते हुए उन्हीं के गुणों का श्रवण करो।

भगवान् के गुणों का गान अर्थात् कीर्तन करने और उसका श्रवण करने पर ही सदा भगवान् का स्मरण किया जा सकता है। इस तरह देखा जाए तो गोस्वामीजी ने गान अर्थात् कीर्तन को ही कलियुग में कल्याण का सर्वश्रेष्ठ मार्ग बताया है। गोस्वामीजी के काल में अनेकानेक लोग रामचरितमानस के माध्यम से श्रीराम का गुणगान करके अनायास ही भवसागर को पार कर गये और आज तक भी अगणित लोग रामचरितमानस का अखण्ड रूप से गान करके कराल कलिकाल के पार जा रहे हैं। इसी प्रकार उस युग में महाप्रभु वल्लभाचार्यजी ने गोवर्धन में श्रीनाथजी के मन्दिर में अष्टछाप के नाम से आठ संतों की नियुक्ति की, जिनमें सूरदासजी, कुम्भनदासजी, परमानन्ददासजी एवं कृष्णदासजी 'श्रीवल्लभाचार्यजी' के शिष्य थे तथा नन्ददासजी, चतुर्भुजदासजी, छीतस्वामी एवं गोविन्दस्वामी आदि महाप्रभु के सुपुत्र गोस्वामी विट्ठलनाथजी के शिष्य थे; ये आठों संतजन श्रीनाथजी के मन्दिर में भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं का स्वरचित पदों द्वारा गायन करते थे, इनमें सूरदासजी सबसे प्रमुख थे, उन्होंने सवा लाख पदों की रचना की थी, उन्होंने अपने एक पद में गान अथवा कीर्तन की महिमा बताते हुए कहा है –

जो सुख होत गुपालहि गाये।
सो सुख होत न जप-तप कीन्हें,
कोटिक तीरथ नहाये।।

श्रीगोपालजी का गुणगान करने में, उनका कीर्तन करने में जो सुख होता है, वह सुख जप करने, तप करने तथा करोड़ों तीर्थों में स्नान करने से भी प्राप्त नहीं होता है।

'आराधना' ही सच्ची सेवा

श्रीकुम्भनदासजी गृहस्थ में रहते हुए भी पूर्ण विरक्त थे और सदा स्वरचित पदों द्वारा श्रीकृष्णगुणों का गान किया करते थे, उनके सात पुत्र थे, जिनमें एक पुत्र तो श्रीनाथजी की गौशाला की गायों की सेवा करते थे और एक पुत्र चतुर्भुजदासजी पिता की तरह मंदिर में स्वरचित पदों के द्वारा गोपालजी की लीलाओं का गान कर कीर्तन-सेवा किया करते थे, शेष पाँच पुत्र भगवद्विमुख थे । कोई कुम्भनदासजी से पूछता कि आपके कितने पुत्र हैं तो वे कहते कि मेरे डेढ़ पुत्र हैं; इसका कारण पूछने पर वे बताते थे कि एक पुत्र तो सदा गौसेवा करता है, अतः वह आधा पुत्र है तथा चतुर्भुजदास मंदिर में कीर्तन-सेवा करता है, सदा ही श्रीकृष्ण-गुणगान करता है, अतः वह पूर्ण भक्त है; शेष पाँच पुत्र तो भगवद्विमुख हैं, अतः मैं उनको अपना पुत्र नहीं मानता हूँ, इसलिए मेरे केवल डेढ़ पुत्र ही हैं । इस तरह देखा जाए तो कुम्भनदासजी ने कीर्तन करने वाले पुत्र को विशेष महत्त्व देते हुए उसे अपना पूर्ण पुत्र माना । इसी प्रकार वृन्दावन में स्वामी हरिदासजी भी अपने इष्ट श्यामा-श्याम को सदा ही लीला-गायन करके रिझाया करते थे, उनके बारे में श्रीनाभाजी ने भक्तमाल में लिखा –

गान कला गन्धर्व श्याम श्यामा को तोषैं ।

महाराष्ट्र में भी संत ज्ञानेश्वर, श्रीनामदेवजी, श्रीतुकारामजी एवं संत एकनाथ आदि संतों ने नाम-कीर्तन की महिमा द्वारा समाज में भक्ति का प्रचार किया । इसी प्रकार गुजरात में नरसी मेहताजी ने प्रकट होकर भक्तिहीन गुजरात को भक्ति की धारा से पावन बनाया । उनके बारे में भक्तमाल में श्रीनाभाजी ने लिखा –

जगत विदित नरसी भगत जिन गुज्जर धर पावन करी ।

नरसीजी दिन-रात कीर्तन किया करते थे और समाज को नाम-कीर्तन की शिक्षा दिया करते थे । अपने एक पद में उन्होंने कहा है – **संसारनो भय निकट न आवे,**

श्रीकृष्ण गोविन्द गोपाल गातां ।

श्रीकृष्ण, गोविन्द, गोपाल आदि नामों का गायन-कीर्तन करने पर संसार का भय निकट नहीं आ सकता । संसार का, काल का सारा भय श्रीकृष्ण का नाम-कीर्तन करने से दूर भाग जाता है । इसी प्रकार राजस्थान में गोपिकावतार श्रीमीराजी प्रकट हुईं और उन्होंने शक्ति की पुजारी वीरभूमि परन्तु भक्तिहीन मरुभूमि में लोकलज्जा को पूर्ण तिलांजलि देकर नृत्य और गान के माध्यम से रसीली भक्ति का प्रचार किया । उनके बारे में श्रीनाभाजी ने भक्तमाल में लिखा –

लोकलाज कुल श्रृंखला तजि मीरा गिरधर भजी ।।
सदृश्य गोपिका प्रेम प्रगट कलियुगहि दिखायो ।

लोकलज्जा और कुल की श्रंखला का सर्वतोभावेन उन्मूलन करके श्रीमीराजी ने गिरधर गोपाल का भजन किया, उन्होंने द्वापर युग की ब्रजगोपिकाओं के दिव्य प्रेम को अपनी भक्ति के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप से कलियुग में दिखाया । मीराजी ने राजकुल की मर्यादा की तनिक भी परवाह नहीं की और अपनी भक्ति से सम्पूर्ण राजस्थान को कृष्णभक्ति के रंग में रंग दिया । मीराबाईजी ने डंके की चोट पर घोषणा कर दी –

राणा जी मैं गोविन्द के गुण गाणा ।
राजा रूठै नगरी रूठै, हरि रूठ्याँ कहाँ जाणा ।
राणा भेज्यो जहर का प्याला, इमरित करि पी जाणा ।
डबिया में भेज्या सर्प भुजंगम, सालिगराम कर जाणा
मीरा तो अब प्रेम दिवानी, साँवलिया वर पाणा ।।

हे राणाजी ! मैं तो गोविन्द का ही गुणगान करूँगी और इसे किसी प्रकार छोड़ नहीं सकती, चाहे राजा रूठ जाए और चाहे सम्पूर्ण नगरी रूठ जाए परन्तु मैं कृष्णगुणगान करना, कीर्तन करना नहीं छोड़ सकती । राणाजी ने कीर्तन से रोकने के लिए मीराजी के पास विष का प्याला भेज दिया परन्तु भगवन्नाम के प्रभाव से मीराजी ने उस विष को पी लिया और वह विष उनके लिए अमृत बन गया । इसी प्रकार उनके पास जहरीले नाग भेजे गये, जो उनकी भक्ति के प्रभाव से मोतियों के हार बन गये । इस तरह मीराजी को कीर्तन से रोकने के लिए चित्तौड़ के राजाओं ने जान से मारने का भरसक प्रयत्न किया परन्तु उनका एक बाल

भी बाँका नहीं हुआ और अंत में मीराजी द्वारका चली गयीं तथा अंतिम समय भी वहाँ ठाकुरजी के मंदिर में उनके सामने नृत्य-गान करते हुए साक्षात् उनके श्रीविग्रह में लीन हो गयीं । मीराबाई की मृत्यु नहीं हुई, वे इसी शरीर से भगवान् के श्रीविग्रह में लीन हो गयीं, इसका कारण भी उन्होंने अपने पद में पहले ही बता दिया था –

गाय-गाय हरि के गुण निसदिन, काल व्याल सों बाँची ।
'मीरा' श्रीगिरधरण लाल सों, भगति रसीली जाँची ।।

मीराजी कहतीं हैं कि मैंने अपने गिरधर गोपाल से रसीली भक्ति माँगी थी, ('श्रीभगवान् का गुणगान करना, कीर्तन करना और नाचना' रसीली भक्ति है ।) इसी रसीली भक्ति (नृत्य-गान) के प्रभाव से मैं काल रूपी सर्प से बच गई हूँ।

इस तरह से मीराजी व अन्य भक्तजनों के चरित्र से हमें शिक्षा लेनी चाहिए कि यदि हम श्रद्धा-विश्वास के साथ कीर्तन करेंगे तो दुनिया की बड़ी से बड़ी शक्ति, यहाँ तक कि काल भी हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता है । इसलिए वर्तमान युग में हमारे देश और विश्व के सामने जो भी संकट उपस्थित हो गया है, इससे बचने और काल पर भी विजय प्राप्त करके भगवत्प्राप्ति करने के सबसे शक्तिशाली और सर्वाधिक सुगम साधन नाम-कीर्तन को हमें अपनाना चाहिए । नाम-कीर्तन ही कलियुग की शक्ति को दुर्बल करता है, इसके लिए हमें कीर्तन को इस प्रकार करना चाहिये कि जिससे अधिक से अधिक लोग इसका लाभ उठा सकें और वह उपाय है - नगर-कीर्तन अथवा प्रभात फेरी । नगर-कीर्तन या कीर्तन-फेरी का यह स्वरूप है कि संकीर्तन करते हुए इस प्रकार से भ्रमण किया जाए कि जिससे अधिक से अधिक लोग हरिनाम सुनें। जो जीव हरिनाम नहीं ले सकते हैं, वे सभी जड़-चेतन योनि के जीव हरिनाम-श्रवण से ही प्रभु को प्राप्त हो जाएँ, ऐसा लक्ष्य करके कीर्तन-भ्रमण करना ही नगर-कीर्तन या कीर्तन-फेरी है । इसे वे ही भक्त कर सकते हैं जिनके हृदय में संसार के प्राणियों के लिए करुणा का सागर लहराता है, जो परोपकार की भावना रखते हैं । केवल अपने ही कल्याण की इच्छा रखने वाले साधक स्वार्थी हैं। प्रह्लादजी ने नृसिंह भगवान् के सामने स्पष्ट कह दिया था – **प्रायेण देव मुनयः स्वविमुक्तिकामा**
मौनं चरन्ति विजने न परार्थनिष्ठाः ।
नैतान्विहाय कृपणान्विमुमुक्ष एको
नान्यं त्वदस्य शरणं भ्रमतोऽनुपश्ये ।।

(श्रीभागवतजी ७/९/४४)

"हे देव ! बड़े-बड़े ऋषि-मुनि तो प्रायः अपनी मुक्ति, अपने कल्याण के लिए निर्जन वन में जाकर मौन व्रत धारण कर लेते हैं, समस्त इन्द्रियों को उनके विषयों से रोककर एकान्तिक साधना में लीन हो जाते हैं, वे दूसरों की भलाई के लिए कोई प्रयत्न नहीं करते हैं परन्तु मेरी दशा तो दूसरी ही हो रही है – मैं अकेले ही भवबन्धन से मुक्त होना नहीं चाहता हूँ, मुझे स्वार्थी भक्त नहीं बनना है ।

हे भगवन् ! मोह रूपी अन्धकार में भूले-भटके जीवों के लिए आपकी शरण के अतिरिक्त और कोई उपाय भी दिखायी नहीं पड़ता, भवबन्धन में जकड़े हुए संसार के इन असहाय गरीबों को छोड़कर मैं अकेले मुक्ति नहीं चाहता ।" ऐसे अति उदार भावना रखने वाले परोपकारी भक्तजन भगवान् के विशेष कृपापात्र बन जाते हैं ।

देवताओं ने भगवान् की स्तुति करते हुए कहा है –

स्वयं समुत्तीर्य सुदुस्तरं द्युमन्
भवार्णवं भीममदभ्रसौहृदाः ।
भवत्पदाम्भोरुहनावमत्र ते
निधाय याताः सदनुग्रहो भवान् ।।

(श्रीभागवतजी १०/२/३१)

हे प्रभो ! आपके भक्त ही संसार के निष्कपट प्रेमी और सच्चे हितैषी होते हैं, वे स्वयं तो बड़े कष्ट से पार होने योग्य भवसागर को पार कर ही जाते हैं किन्तु दूसरों के कल्याण के लिए भी वे यहाँ आपके चरणकमलों की नौका स्थापित कर जाते हैं, ऐसे अति उदार भक्तजन श्रीभगवान् को सर्वाधिक प्रिय लगते हैं । 'श्रीभगवान् के नाम-रूप-लीला-धाम-जन इत्यादि का गुणगान व संकीर्तन' भीषण भवसागर को पार करने की 'नौका' है ।

परम कल्याणकारी 'श्रीभगवन्नाम'

स्वयं श्रीभगवान् ने कहा है –

य इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति ।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः ।।
न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः ।
भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि ।।

(श्रीगीताजी १८/६८,६९)

"जो मेरा प्रेमी भक्त गीताशास्त्र के इस गोपनीय सन्देश को मेरे भक्तों में कहेगा, वह निःसन्देह मुझको ही प्राप्त होगा; उससे बढ़कर मेरा प्रिय कार्य करने वाला कोई नहीं है, न ही कोई भविष्य में दूसरा होगा ।" अतः जो नाम-कीर्तन का प्रचार करता है, प्राणियों को भगवन्नाम का, भगवद्-यश का दान करता है, वह भगवान् को सर्वाधिक प्रिय होता है। ब्रजगोपियों ने भी भागवत में कहा है –

भुवि गृणन्ति ते भूरिदा जनाः ।

(श्रीभागवतजी १०/३१/९)

संसार का सबसे बड़ा दानी कौन है ? धन-सम्पत्ति, अन्न-वस्त्र देने वाला सबसे बड़ा दानी नहीं है । यदि भक्तिमय दृष्टि से देखा जाए तो संसार में वास्तविक सबसे बड़ा दानी वही है जो भगवान् के नाम का, भगवान् की कथाओं का निष्काम भाव से दान करता है ।

माला द्वारा नाम जप करने से केवल जप करने वाले का ही कल्याण होता है, उसके द्वारा अन्य जीवों का कल्याण, परोपकार नहीं होता है। जबकि उच्च स्वर से कीर्तन करने पर नाम-श्रवण करने वाले अगणित जीवों का कल्याण होता है । इसीलिए श्रीचैतन्यमहाप्रभु ने जप से अधिक महत्त्व कीर्तन का बताया है –

जपि लेई हरिनाम करिया निज साधन,
उच्च स्वर संकीर्तन करे परोपकारे ।

एक स्थान पर बैठकर कीर्तन करना जप से अधिक महत्वपूर्ण है किन्तु एक स्थान पर बैठकर कीर्तन करने से उसी स्थान पर स्थित लोग नाम-श्रवण कर सकते हैं, अतः उसी स्थान के लोगों का कल्याण होता है, उसकी तुलना में नगर-कीर्तन या कीर्तन-फेरी करने पर पूरे गाँव की गलियों में अथवा नगर के मोहल्ले में होकर कीर्तन करते हुए भ्रमण करते हैं तो इससे अधिक से अधिक जीवों को नाम-श्रवण करने का अवसर मिलता है और उससे अधिकाधिक लोगों का कल्याण होता है ।

पशु पक्षी कीट भृंग बोलि ते न पारे ।
शुनि लेई हरि नाम तारा सब तरे ।।

पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े आदि जीव-जंतु भगवान् के नाम का उच्चारण नहीं कर सकते हैं, परन्तु नाम का श्रवण कर सकते हैं । जब हम नगर-कीर्तन करते हुए भ्रमण करते हैं तो ये जीव भी हरिनाम के श्रवण से चौरासी लाख योनियों के बन्धन से मुक्त हो जाते हैं, इनका भी कल्याण हो जाता है । अत्यन्त पापी से पापी मनुष्य जो कभी भगवान् का नाम नहीं लेते हैं, नाम के श्रवण से उनके भी अनेकानेक जन्मों के पाप नष्ट होते हैं और कलियुग के दोषों से दूषित हुआ उनका अंतःकरण शुद्ध हो जाता है । श्रीमद्भागवत में कहा है – **यन्नाम गृह्णन्नखिलान् श्रोतृनात्मानमेव च ।**
सद्यः पुनाति किं भूयस्तस्य स्पृष्टः पदा हि ते ।।

(श्रीभागवतजी १०/३४/१७)

"जो पुरुष भगवान् के नाम का कीर्तन करता है, वह स्वयं तो पवित्र होता ही है, साथ ही नाम का श्रवण करने वाले समस्त जीवों को भी पवित्र कर देता है; यहाँ तक कि पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े आदि जीव भी नाम के श्रवण से पवित्र हो जाते हैं।" माता देवहूतिजी ने अपने पुत्र कपिल भगवान् से कहा है –

यन्नामधेयश्रवणानुकीर्तनाद्
यत्प्रह्वणाद्यत्स्मरणादपि क्वचित् ।
श्वादोऽपि सद्यः सवनाय कल्पते
कुतः पुनस्ते भगवन्नु दर्शनात् ।।

(श्रीभागवतजी ३/३३/६)

"हे प्रभो ! आपके नामों को सुनने, कीर्तन करने से अथवा वन्दन या स्मरण करने से ही कुत्ते के माँस को खाने वाला चाण्डाल भी सोमयज्ञ करने वाले ब्राह्मण के समान पूजनीय हो जाता है, फिर जो आपका दर्शन करके कृतकृत्य हो जाए – इसमें तो आश्चर्य ही क्या है ?

अहो बत श्वपचोऽतो गरीयान्
यज्जिह्वाग्रे वर्तते नाम तुभ्यम् ।
तेपुस्तपस्ते जुहुवुः सस्नुरार्या
ब्रह्मानूचुर्नाम गृणन्ति ये ते ॥

(श्रीभागवतजी ३/३३/७)

अरे ! वह चाण्डाल भी सर्वश्रेष्ठ है, जो अपनी जीभ से सदा भगवान् का नाम लेता रहता है। जो भी श्रेष्ठ पुरुष भगवान् का नाम लेते हैं, उन्होंने तप, हवन, तीर्थस्नान, सदाचार का पालन, वेदाध्ययन आदि सब कुछ कर लिया। सुबह के समय कीर्तन की फेरी में जाने को 'प्रभात फेरी' कहते हैं तथा शाम के समय की फेरी को 'संध्या फेरी' कहते हैं, इस कीर्तन-फेरी में जो नाम-कीर्तन किया जाता है, वह नाम का दान होता है; पद्मपुराण में इस नाम-दान की महिमा का इस प्रकार उल्लेख किया गया है –

गोकोटि दानं ग्रहणेषु काशी माघे प्रयागे यदि कल्पवासी ।
यज्ञायुतं मेरुसुवर्ण दानं गोविन्द नाम्ना न भवेच्च तुल्यम् ॥

ग्रहणकाल में काशी में करोड़ों गायों का दान किया जाए, जो कि वर्तमान काल में असम्भव है किन्तु यदि कोई ऐसा भी कर ले तो भी यह 'गोविन्द के एक नाम' के दान के बराबर नहीं है; इसी तरह माघ महीने में प्रयाग में कल्पवास किया जाए, हजारों यज्ञ किये जाएँ तथा सुमेरु पर्वत के बराबर स्वर्ण का दान दिया जाए – ये सब बड़े-बड़े पुण्य मिलकर भी 'श्रीभगवान् के एक नाम' के दान के बराबर नहीं हो सकते हैं। कीर्तन-फेरी के समय गाँव अथवा नगर के एक बड़े क्षेत्र में भ्रमण करते हुए जिस प्रकार नाम-कीर्तन किया जाता है, इससे जहाँ तक भी नाम की ध्वनि गूँजती है, वहाँ तक कलियुग की शक्ति क्षीण होती है, बड़े-बड़े पाप नष्ट होते हैं, भूत-प्रेत की बाधा, ग्रहों की बाधाएँ तथा बड़े-बड़े संकट समाप्त हो जाते हैं । गोस्वामी तुलसीदासजी ने रामचरितमानस में लिखा है –

राम नाम नरकेसरी कनककसिपु कलिकाल ।
जापक जन प्रह्लाद जिमि पालिहि दलि सुरसाल ॥

राम का नाम श्रीनृसिंह भगवान् है, कलियुग हिरण्यकशिपु है तथा नाम का उच्चारण करने वाले भक्तजन प्रह्लाद के समान हैं। यह राम नाम देवताओं के शत्रु कलियुग रूपी दैत्य को मारकर नाम लेने वालों की रक्षा करेगा । सतयुग में हिरण्यकशिपु ने तपस्या करके ब्रह्माजी से वरदान प्राप्त करके अजेय शक्ति प्राप्त कर ली थी, तीनों लोकों में उसका साम्राज्य स्थापित हो गया था, कोई उसे हरा नहीं सकता था, अतः वह सभी पर अत्याचार करने लगा। सनातन धर्म को समूल नष्ट करने में जुट गया । गोस्वामीजी कहते हैं कि यह कलियुग भी हिरण्यकशिपु के समान है। जिस प्रकार हिरण्यकशिपु का साम्राज्य त्रिलोकी में फैला था, उसी प्रकार आज दुनिया में सर्वत्र कलियुग का ही साम्राज्य है और जिस प्रकार वह सनातन धर्म को नष्ट करने में संलग्न था, उसी प्रकार कलियुग भी चारों ओर नये-नये भीषण पापों का सृजन करके सनातन धर्म को नष्ट करने में जुटा हुआ है, इसके प्रभाव से सर्वत्र पापी-दुराचारी लोगों की वृद्धि हो रही है, जिनके पातकों से संसार में सभी जगह अशान्ति फैली हुई है । परन्तु जब हिरण्यकशिपु ने घोर अत्याचार करना प्रारम्भ किया तो उसी के पुत्र प्रह्लादजी ने उसकी आज्ञा के विरुद्ध नाम- कीर्तन का अभियान छेड़ दिया। हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद को रोकने का प्रयास किया फिर भी वे नहीं रुके तो वह उनको जान से मारने के लिए तरह-तरह के प्रयास करने लगा तब अन्त में भगवान् ने नृसिंह रूप धारणकर उस दुर्दान्त दैत्य का वध कर दिया और अपने भक्त प्रह्लाद की रक्षा की । ठीक इसी प्रकार कलियुग भी हिरण्यकशिपु के समान समाज में घोर उत्पात मचा रहा है। ऐसे में जिस प्रकार प्रह्लाद जी ने कीर्तन करके हिरण्यकशिपु के सामने चुनौती पेश की तो जो भक्त नाम कीर्तन करते हैं, वे प्रह्लाद के समान हैं। भगवान् का नाम ही नृसिंह भगवान् है । कीर्तन-फेरी में नाम-कीर्तन के माध्यम से नाम के रूप में नृसिंह भगवान् प्रकट होकर कलियुग की शक्ति को नष्ट कर देते हैं। जिस प्रकार नृसिंह भगवान् ने प्रकट होकर घनघोर गर्जना की, उसे सुनकर हिरण्यकशिपु भयभीत हो गया था, ठीक उसी प्रकार प्रभात फेरी में जोर-जोर से नाम की ध्वनि करने से कलियुग भी भयभीत हो जाता है, उसकी शक्ति नष्ट हो जाती है, उसके द्वारा उत्पन्न किये गये विभिन्न प्रकार के पाप तुरन्त ही नाम-कीर्तन की गर्जना से जलकर राख हो जाते हैं और इस प्रकार से नाम कीर्तन करने वाले प्रह्लाद रूपी भक्तों की तथा उनके द्वारा उच्चारित किये गये नाम को श्रवण करने वाले जीवों की रक्षा होती है।

अनिष्ट विनाशक 'श्रीनामाराधन'

कलियुग रूपी दैत्य को पराजित करने के लिए नाम रूपी नृसिंह भगवान् की आवश्यकता है और इसके लिए यह जरूरी है कि नाम-कीर्तन करने वाले प्रह्लाद रूपी भक्त अधिक से अधिक संख्या में तैयार हों और अपने कीर्तन एवं प्रभात फेरी की अधिकाधिक वृद्धि करें क्योंकि यही एकमात्र ऐसा साधन है जिसके माध्यम से संसार में चारों ओर फैली हुई अराजकता को दूर करके सर्वत्र आनन्द-मंगल का साम्राज्य स्थापित किया जा सकता है।

नाम कामतरु काल कराला।
सुमिरत समन सकल जग जाला॥
राम नाम कलि अभिमत दाता।
हित परलोक लोक पितु माता॥

(श्रीरामचरितमानसजी, बालकाण्ड -२७)

गोस्वामीजी कहते हैं कि कलियुग रूपी इस कराल (भयंकर) काल में 'भगवान् का नाम' कल्पवृक्ष के समान हमारी समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला है। 'नाम-कीर्तन' करने से संसार के सभी जंजालों का नाश हो जाता है। 'भगवान् का नाम' मनोवांछित फल देने वाला है, यह परलोक का परम हितैषी और इस लोक का माता-पिता है अर्थात् परलोक में भगवान् का परम धाम देता है तथा इस लोक में माता-पिता के समान सब प्रकार से पालन और रक्षण करता है। कलियुग में अनेक प्रकार के पाप, दुराचार बढ़ रहे हैं, इस्लामिक नरपिशाच हिन्दू समाज का भक्षण करने के लिए कमर कसकर तैयारी कर रहे हैं। विश्व में तृतीय विश्व युद्ध के बादल मँडरा रहे हैं; इनसे लड़ने के लिए हथियार, सैन्य शक्ति या आणविक शक्ति काम नहीं देगी, इसको पराजित करने के लिए 'भगवान् का नाम' ही काम देगा। पाँच सौ वर्ष पूर्व भारत वर्ष में इस्लामी आततायियों को पराजित करने के लिए जो भी महापुरुष भगवद्धाम से अवतरित हुए, उन सभी ने पूरे देश में भगवन्नाम-कीर्तन का ही प्रचार किया, उससे कलियुग की शक्ति क्षीण हुई। कलियुग द्वारा उत्पन्न किये गये उपद्रवों को जीतने के लिए परमाणु बम, हाइड्रोजन बम, न्यूट्रान बम आदि निरर्थक हैं।

हाल ही में भारत के कुछ संतों ने इस्लामी जेहादियों के कुकृत्यों से परेशान होकर हरिद्वार और चित्रकूट में 'धर्म-संसद' का आयोजन किया था, वहाँ उन्होंने इस बात पर चिन्ता व्यक्त की कि मुस्लिम कट्टरपन्थी आये दिन हिन्दू समाज पर आक्रामक हमले करते रहते हैं, इनकी जनसंख्या भी तेजी से बढ़ रही है और हिन्दुओं की आबादी तेजी से घटती जा रही है; यदि यही स्थिति रही तो एक दिन 'भारत' इस्लामिक राष्ट्र बन जाएगा। मुस्लिम समाज के लोग हिन्दुओं के ऊपर प्रायः हिंसक हमले करते रहते हैं और उनकी हत्या कर देते हैं। हरिद्वार की धर्म-संसद में तो संतों ने इस विषम स्थिति से निपटने के लिए हिन्दुओं से आह्वान किया कि वे भी आत्मरक्षा के लिए हाथों में हथियार उठायें और हमलावर मुस्लिमों के ऊपर स्वयं भी शस्त्रों द्वारा हमले करें, उनकी हिंसा का जवाब स्वयं भी हिंसा से दें। हिन्दुओं की घटती जनसंख्या को लेकर संतों ने हिन्दू-समाज को सुझाव दिया कि वे अधिक सन्तान उत्पन्न करके अपनी आबादी को बढ़ायें। इन धर्म-संसदों के आयोजन द्वारा संतों द्वारा समस्या के समाधान के लिए इस तरह के जो उपाय बताये गये, वे शास्त्र-विरुद्ध होने के कारण पूर्णतया निरर्थक हैं; उनसे हिन्दू-समाज को कोई लाभ नहीं होने वाला क्योंकि हमारे शास्त्रों में कलियुग की समस्त समस्याओं के निदान के रूप में एकमात्र हरिनाम कीर्तन को ही सर्वप्रमुख साधन बताया गया है।

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेनामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

कलियुग में केवल हरिनाम, हरिनाम और हरिनाम से ही उद्धार हो सकता है, समस्याओं का समाधान हो सकता है। हरिनाम के अतिरिक्त इस युग में कल्याण का, विपत्तियों से बचने का अन्य कोई उपाय नहीं है, नहीं है, नहीं है। इस श्लोक में तीन बार जोर देकर नाम के महत्त्व

को इसलिए कहा गया है कि यदि कोई सोचता है कि नाम के अतिरिक्त किसी अन्य उपाय से समस्याओं का समाधान किया जा सकता है तो ऐसा सर्वथा असम्भव है। हमें विचार करना चाहिए कि पाँच सौ वर्ष पूर्व जब सम्पूर्ण भारत में इस्लामी हमलावरों का शासन था और वे अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर सनातन धर्म का समूल विनाश करने में लगे थे, तलवार के बल पर हिन्दुओं को जबरन मुसलमान बना रहे थे, हिन्दुओं के मन्दिरों, तीर्थस्थानों तथा उनके धर्मग्रन्थों को नष्ट कर रहे थे; उस समय भगवत्कृपा से सनातन धर्म की रक्षा के लिए सम्पूर्ण भारतवर्ष में भगवद्धाम से जो भी महापुरुष अवतरित हुए, उन सभी ने एकमात्र नाम-कीर्तन के प्रचार द्वारा ही हिन्दू-समाज की रक्षा की। किसी ने भी विपत्तियों के निवारण के लिए हरिनाम के अतिरिक्त अन्य किसी साधन को अपनाने का सुझाव नहीं दिया। यहाँ तक कि सतयुग में उत्पन्न हुए भक्तराज प्रह्लाद के पिता हिरण्यकशिपु ने तो कठोर तपस्या के द्वारा ब्रह्माजी से वरदान प्राप्त करके त्रिलोकी पर विजय प्राप्त कर ली थी, उसने देवताओं को स्वर्ग से भगाकर उस पर आधिपत्य कर लिया था और असुरों को सनातन धर्म के समूल विनाश का आदेश दे दिया था, उसके आदेश से दुर्दान्त दैत्य सनातन धर्मावलम्बी प्रजा पर भीषण अत्याचार करने लगे। हिरण्यकशिपु के कठोर शासन से सब लोक और लोकपाल घबरा गये, जब उन्हें और कहीं किसी का आश्रय नहीं मिला तब उन्होंने भगवान् की शरण ली। भगवान् ने उनको निर्भय करने के लिए आकाशवाणी के माध्यम से आश्वासन दिया –

यदा देवेषु वेदेषु गोषु विप्रेषु साधुषु।
धर्मे मयि च विद्वेषः स वा आशु विनश्यति॥

(श्रीभागवतजी ७/४/२७)

"कोई भी प्राणी जब 'देवता, वेद, गाय, ब्राह्मण, साधु, धर्म और मुझसे' द्वेष करने लगता है; तब शीघ्र ही उसका विनाश हो जाता है। जब यह अपने महात्मा पुत्र प्रह्लाद से द्रोह करेगा, उसका अनिष्ट करना चाहेगा, तब वर के कारण शक्तिसम्पन्न होने पर भी इसे मैं अवश्य मार डालूँगा।" भगवान् ने उपरोक्त श्लोक में जो कहा, हमें उस पर ध्यान देना चाहिए कि 'देवता, गाय, ब्राह्मण, संत, सनातन धर्म और भगवान्' से द्वेष करने वाले का शीघ्र ही विनाश हो जाता है। हिरण्यकशिपु और रावण जैसे अजेय और त्रिलोक विजयी असुरों का 'सनातन धर्म' से द्वेष करने के कारण भगवान् ने विनाश कर दिया। इस्लामी आक्रान्ताओं ने बहुत लम्बे समय तक भारत पर शासन किया किन्तु इन्होंने 'सनातन धर्म' से द्वेष किया, उसे समाप्त करने का प्रयास किया तो औरंगजेब के कठोर अत्याचारों के बाद से ही भारत से मुगल साम्राज्य का पतन हो गया और बहुत शीघ्र ही मुसलमानों के हाथों से सत्ता चली गयी और वे सनातन धर्म का समूल विनाश करने के अपने लक्ष्य में पूर्णतया असफल सिद्ध हुए। मुसलमानों के बाद भारत में अंग्रेजों ने लगभग दो सौ वर्षों तक शासन किया और उन्होंने भी सनातन धर्म को नष्ट करने के बहुत प्रयत्न किये। 'गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति' का नाश करके उन्होंने आधुनिक स्कूली शिक्षा पद्धति के रूप में धर्म-विरोधी नास्तिक शिक्षा की आधारशिला रखी। गायों का नाश करने के लिए बड़ी संख्या में कसाईखाने स्थापित किये। अंग्रेजों ने दुनिया के पचास से भी अधिक देशों में अपने साम्राज्य को स्थापित किया। उनके बारे में ऐसा कहा जाता था कि ब्रिटिश साम्राज्य में कभी सूर्यास्त नहीं होता अर्थात् भारत में ऐसी धारणा बन गयी थी कि अंग्रेज अब इस देश को कभी छोड़कर नहीं जायेंगे और उनका सदा के लिए यहाँ शासन बना रहेगा। परन्तु सनातन धर्म का ह्रास करने के कारण द्वितीय विश्व युद्ध में जर्मनी के तानाशाह हिटलर के हाथों अंग्रेजों को बुरी तरह पिटना पड़ा और अन्त में सन् १९४७ में उन्हें इस देश को छोड़कर जाने के लिए विवश होना पड़ा। स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् भारत में जो कांग्रेस सरकार बनी, वह भी सनातन धर्म की विरोधी तथा भोग-ऐश्वर्य की ही उपासक थी, इस पार्टी ने मुसलमानों से वोट प्राप्त करके सत्ता में बने रहने के लिए मुस्लिम तुष्टीकरण की नीति अपनाई और हिन्दुओं की पूर्ण उपेक्षा कर दी, सनातन धर्म पर प्रबल कुठाराघात किया तो अन्त में परमेश्वर के विधान से

यह पार्टी भी सन् २०१४ में सत्ता से हाथ धो बैठी और अब तो दिनों-दिन इसका पतन होता जा रहा है एवं ईश्वर की असीम कृपा से सनातन धर्म को लेकर चलने वाले प्रधानमन्त्री श्रीनरेन्द्रमोदीजी तथा उत्तरप्रदेश के कट्टर हिन्दूवादी मुख्यमन्त्री श्रीयोगीजी के नेतृत्त्व में सनातन धर्म पुनः अपने खोये हुए गौरव को प्राप्त करने की ओर अग्रसर है। इसी कड़ी में अयोध्या में जन्मभूमि पर भगवान् श्रीराम के भव्य मन्दिर का निर्माण कार्य जोर-शोर से चल रहा है तथा काशी में भी मोदीजी के द्वारा भव्य विश्वनाथ मन्दिर परिसर का निर्माण किया गया है । इन सब असम्भव से प्रतीत होने वाले कार्यों की सफलता को देखकर हम लोगों को निराश नहीं होना चाहिए, अपना धैर्य नहीं खोना चाहिए तथा पूर्ण उत्साह के साथ सफलता के एकमात्र मूलमन्त्र हरिनाम-कीर्तन के देशव्यापी प्रचार के अभियान में जुट जाना चाहिए । हिरण्यकशिपु को परास्त करने के लिए प्रह्लादजी ने किसी प्रकार के अस्त्र-शस्त्र का उपयोग नहीं किया, केवल नाम-कीर्तन रूपी सर्वश्रेष्ठ हथियार का प्रयोग किया, उन्होंने हिरण्यकशिपु द्वारा स्थापित किये गये आसुरी गुरुकुल में अध्ययन करते समय ही अपने सहपाठी असुर बालकों को निर्भय करते हुए घोषणा कर दी –

पढ़ो भाई राम मुकुंद मुरारि ।
चरन-कमल मन सनमुख राखौ, कहूँ न आवै हारि ॥
कहै प्रह्लाद सुनौ रे बालक, लीजै जनम सुधारि ।
को है हिरनकसिप अभिमानी, तुम्हैं सकै जो मारि ॥
जनि डरपौ जड़मति काहू सौं, भक्ति करौ इकसारि ।
राखनहार अहै कोउ औरे, स्याम धरै भुज चारि ॥
सत्यस्वरूप देव नारायन, देखौ हृदय बिचारि ।
'सूरदास' प्रभु सब में व्यापक, ज्यौं धरनी में बारि ॥

प्रह्लादजी ने असुरबालकों से कहा – "अरे भाइयो ! राम, मुकुन्द, मुरारि आदि भगवन्नामों की पढ़ाई करो अर्थात् वाणी से सुन्दर भगवन्नामों का कीर्तन करो और मन को भगवान् के चरण-कमलों के सम्मुख रखो (निरन्तर भगवत्स्मरण करो) । ऐसा करने से कभी तुम्हारी पराजय नहीं होगी । तुम्हें भगवान् की कृपा से जो दुर्लभ मनुष्य शरीर मिला है, हरिनाम-कीर्तन के द्वारा उसे सुधार लो । अभिमानी हिरण्यकशिपु कौन है, उसकी क्या सामर्थ्य है, भगवान् का कीर्तन करोगे तो वह तुम्हें मार नहीं पायेगा । हिरण्यकशिपु से डरो नहीं, हरिनाम का आश्रय लेकर अखण्ड भक्ति करो। तुम्हारी रक्षा करने वाले हैं चतुर्भुज श्यामसुन्दर, वे ही सत्यस्वरूप आदि देव नारायण हैं । अपने हृदय में विचार करो कि जिस प्रकार जल पृथ्वी के अन्दर सभी स्थान पर विद्यमान रहता है, उसी प्रकार श्रीभगवान् भी चराचर जगत् में सभी जगह व्याप्त हैं।"

प्रह्लादजी ने इस प्रकार अपने शक्तिशाली पिता के ही गुरुकुल में असुरबालकों को भक्ति की शिक्षा देकर हरिनाम-कीर्तन का प्रचार किया और अन्त में भगवान् ने उनकी रक्षा की तथा हिरण्यकशिपु का संहार किया । इसी प्रकार हम लोगों को भी प्रह्लाद जी तथा कलियुग के अन्य सभी महापुरुषों के जीवन से शिक्षा ग्रहण करते हुए आज के कठिनाइयों से भरे युग में श्रीहरिनाम-संकीर्तन का ही आश्रय लेकर सर्वत्र इसका प्रचार-प्रसार करना चाहिए।

आज सोये हुए हिन्दू समाज को हरिनाम के घोष द्वारा पुनर्जीवित करने की बहुत बड़ी आवश्यकता है। बड़े दुःख की बात है कि प्राचीनकाल में सारी दुनिया में सनातन धर्म का प्रभाव था किन्तु कलियुग के आगमन के पश्चात् सनातन धर्म का प्रभाव दुनिया में तेजी से घटता गया और आज दुनिया में चारों ओर हिंसक व चरित्रहीन मुसलमानों और ईसाइयों की ही भरमार है। इन धर्मावलम्बियों ने अपने कुत्सित आचरणों के द्वारा दुनिया में विनाश की स्थिति उत्पन्न कर दी है। भारतवर्ष की संस्कृति व धर्म को बचाने के लिए आवश्यकता है कि सबसे पहले हिन्दू- समाज संगठित हो। यह भी बड़े दुःख का विषय है कि आज हिन्दू-समाज में एकता का अभाव है । सांसारिक गृहस्थ लोग जाति-पाँति के भेदभाव में बँधे हुए हैं तो साधु-समाज साम्प्रदायिक-संकीर्णता से ग्रसित है। इसी कारण से हिन्दू-समाज में कोई संगठन नहीं है और परस्पर के राग-द्वेष ने ही उन्हें कमजोर कर दिया है। विषमता की इस दुःखद स्थिति से बचने के लिए आज हिन्दुओं को चाहिए कि जाति-पाँति के बन्धन से बाहर निकलें। संत-महापुरुषों ने कहा है –

जात-पाँत पूछे नहिं कोई ।
हरि को भजे सो हरि को होई ॥

'रसोपासना' से सहज श्रीभगवत्प्राप्ति

भगवान् तो केवल निर्मल भक्ति से प्रसन्न होते हैं। यदि ब्रह्मा भी भक्तिहीन हो तो भगवान् के लिए उनका कोई महत्त्व नहीं है। भक्तमाल में श्वपच वाल्मीकि, शबरीजी तथा संत रैदासजी की कथायें हैं; निम्न कुल में जन्म होने पर भी भगवान् ने उन्हें ऋषि-मुनियों और ब्राह्मणों से अधिक सम्मान दिया। इसलिए ऊँच-नीच के भेदभाव से हिन्दू-समाज को बचना चाहिए क्योंकि विधर्मियों ने इसका लाभ उठाकर अनगिनत हिन्दुओं को ईसाई और मुसलमान बना दिया है और अपने इस अभियान में संलग्न होकर हिन्दू-धर्म को ये लोग बहुत बड़ी क्षति पहुँचा रहे हैं। इसी प्रकार हिन्दू-समाज की एक अन्य बहुत बड़ी त्रासदी यह है कि धन के लोभ ने हमारे धर्म को खोखला बना दिया है। कथावाचक धन के लोभ से कथा करने लगे हैं, उन्होंने कथा को जीविकोपार्जन का साधन बना रखा है, ऐसा होने से कथा का सार चला गया है। पद्म पुराणोक्त भागवत माहात्म्य में देवर्षि नारदजी ने कहा है –

विप्रैर्भागवती वार्ता गेहे गेहे जने जने।
कारिता कणलोभेन कथासारस्ततो गतः॥

(श्रीभागवतमाहात्म्य १/७१)

ब्राह्मण केवल अन्न-धनादि के लोभवश घर-घर एवं जन-जन को भागवत की कथा सुनाने लगे हैं, इसलिए कथा का सार चला गया है। इसी प्रकार कीर्तन करने के लिए भी लोग पैसा लेने लगे हैं तो कीर्तन का भी सार चला गया है। इसलिए यदि हमें सनातन धर्म को सशक्त करना है तो कथा-कीर्तन के व्यापारीकरण की प्रवृत्ति पर अंकुश लगाना अत्यधिक आवश्यक है अन्यथा इससे समाज को लाभ के स्थान पर बहुत बड़ी हानि उठानी पड़ेगी।

इसी प्रकार साधु-वैष्णव समाज में साम्प्रदायिक संकीर्णता का घोर वैषम्य फैला हुआ है। हमें विचार करना चाहिए कि सम्प्रदायों की स्थापना भगवत्कृपा-प्राप्त आचार्यों द्वारा सनातन धर्म को सशक्त बनाने के लिए की गयी थी और उन्हें छोटा-बड़ा अथवा अपना-पराया समझकर परस्पर द्वेष करना बहुत बड़ा भक्तापराध है। सबसे पहले तो स्वयं धर्माचार्यों, धर्मोपदेशकों एवं कथावाचकों को ही धन के लोभ और साम्प्रदायिक वैमनस्य के विष से बचना चाहिए तभी वे अपना और समाज का कल्याण कर सकेंगे, नहीं तो वे स्वयं ही कमजोर होकर पतन को प्राप्त हो जायेंगे।

संत-महापुरुषजन भगवत्कृपा से अवतरित होते हैं और उनका दया-द्रवित हृदय प्रत्येक प्राणी के कष्ट-हरण के लिए सदा तत्पर रहता है। केवल ब्रजवासियों पर ही नहीं अपितु समस्त जीव-जगत् पर कृपा करने के लिए ऐसे ही परम विरक्त संत श्रीरमेशबाबाजीमहाराज का अवतरण हुआ और जो तीर्थराज प्रयाग की अपनी जन्मभूमि से अल्पायु में ही ब्रजनिष्ठा के भाव से ब्रज-वसुन्धरा की परम रसमयी लीलास्थली श्रीधाम बरसाना, गह्वरवन में स्थित श्रीराधारानी के मानभवन (मानगढ़) में निवास करने लगे; यहाँ रहकर उन्होंने ब्रजवासियों को प्रेरित करना प्रारम्भ किया कि इस कलियुग में कोई जीव कठिन साधन नहीं कर सकता और भगवन्नाम-कीर्तन से बड़ा तथा सरस कोई साधन नहीं है, यह अत्यन्त ही सरल और सुलभ है; तभी तो गोस्वामी तुलसीदासजी ने लिखा है –

सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू।
लोक लाहु परलोक निबाहू॥

(श्रीरामचरितमानसजी, बालकाण्ड -२०)

भगवान् ने स्वधाम-गमन के पूर्व अपनी सारी शक्ति अपने नाम में स्थापित कर दी। 'भगवान् के नाम' में भगवान् से भी अधिक शक्ति है –

राम एक तापस तिय तारी।
नाम कोटि खल कुमति सुधारी॥

(श्रीरामचरितमानसजी, बालकाण्ड -२४)

श्रीरामजी ने तो एक तपस्वी ऋषि गौतम की पत्नी अहिल्या का उद्धार किया परन्तु उनके नाम ने तो करोड़ों दुष्टों की बिगड़ी हुई बुद्धि को सुधार दिया। आवश्यकता है विश्वास की, बिना विश्वास के तो भगवान् प्रत्यक्ष दर्शन भी दे दें तो भी हम उन्हें नहीं जान पायेंगे।

अनन्त ब्रह्माण्डों के अगणित भगवद्धामों में 'ब्रज' का स्थान सर्वोपरि है, परम प्रेमरसमय व सदा सुलभ होने से यह वैकुण्ठ

से भी श्रेष्ठ है – **"अहो मधुपुरी रम्या वैकुण्ठाच्चगरीयसी"** (वायुपुराण) ब्रजभूमि की सबसे बड़ी सेवा है – श्रीकृष्णगुणगान।

द्वापरयुग में श्रीकृष्णलीलाकाल में सारा ब्रज निरन्तर श्रीकृष्णगुणगान की मंगलमयी ध्वनि से गुंजायमान रहा करता था, यहाँ तक कि श्रीकृष्ण के मथुरा एवं द्वारका चले जाने के पश्चात् भी ब्रजवासी, गोपी-ग्वाल अपने दैनिक क्रियाकलापों को करते समय भी सदा श्रीकृष्णगुणगान किया करते थे। जब उद्धवजी ब्रजवासियों की विरहव्यथा को दूर करने के लिए श्रीकृष्ण का सन्देश लेकर ब्रज में आये तब भी उन्होंने यही दृश्य देखा कि ब्रजगोपिकाओं के द्वारा गाये हुए श्रीकृष्णलीलाचरित्र के गान की ध्वनि त्रिलोकी को परम पावन कर रही थी, यह देखकर उन्होंने ब्रजदेवियों की चरणरज की वन्दना करते हुए कहा –

वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणां पादरेणुमभीक्ष्णशः।
यासां हरिकथोद्गीतं पुनाति भुवनत्रयम्॥

(श्रीभागवतजी १०/४७/६३)

मैं श्रीनन्दबाबा के ब्रज में रहने वाली इन ब्रजदेवियों के चरणरज की बारम्बार वन्दना करता हूँ, जिनके द्वारा श्रीकृष्णलीलागान से त्रिलोकी पवित्र हो रही है।

स्कन्द पुराणोक्त भागवत माहात्म्य में वर्णन है कि भगवान् श्रीकृष्ण इस पृथ्वी पर अपनी लीला संवरण करके जब नित्यधाम को पधार गये तो उनकी विरह-वेदना से व्याकुल होकर उनकी सोलह हजार रानियों ने श्रीकृष्ण की चतुर्थ पटरानी 'यमुनाजी' को आनन्दित देखकर उनसे श्रीकृष्ण-प्राप्ति का उपाय पूछा तो यमुनाजी ने कहा – "गोवर्धन पर्वत के निकट भगवान् की लीला-सहचरी गोपियों की विहार-स्थली है; वहाँ की लता-पता, बेल, तृण-अंकुर के रूप में उद्धवजी वहाँ निवास करते हैं; लता इत्यादि के रूप में उनके रहने का उद्देश्य है कि भगवान् की प्रियतमा गोपियों की चरणरज उन पर पड़ती रहे। उद्धवजी के सम्बन्ध में एक निश्चित बात यह भी है कि उन्हें भगवान् ने अपना उत्सव-स्वरूप प्रदान किया है। वह उत्सव है – वाद्ययंत्रों के वादन के साथ भगवान् श्रीकृष्ण की मधुर लीलाओं का गान।

'भगवान् का उत्सव' उद्धवजी का अंग है, वे उससे अलग नहीं रह सकते, इसलिए अब तुम लोग श्रीकृष्ण प्रपौत्र वज्रनाभ को साथ लेकर वहाँ जाओ और कुसुमसरोवर के पास ठहरो। भगवद्भक्तों की मण्डली एकत्र करके वीणा, वेणु, मृदंग आदि बाजों के साथ भगवान् के नाम और लीलाओं के कीर्तन, भगवत्सम्बन्धी काव्य-कथाओं के श्रवण तथा भगवद्गुण-गान से युक्त सरस संगीत के द्वारा महान उत्सव आरम्भ करो। इस तरह जब उस महान उत्सव का विस्तार होगा, तब निश्चय ही उद्धवजी का वहाँ दर्शन मिलेगा और फिर वे ही तुम सब लोगों के श्रीकृष्ण-प्राप्ति के मनोरथ को पूर्ण करेंगे।" श्रीयमुनाजी की बताई विधि के अनुसार वज्रनाभ, परीक्षित तथा श्रीकृष्ण-पत्नियों ने उसी समय गोवर्धन के निकट कुसुमसरोवर पर पहुँचकर श्रीकृष्ण-संकीर्तन का रसमय उत्सव आरम्भ कर दिया। वृषभानुनन्दिनी श्रीराधिका तथा उनके प्रियतम श्रीकृष्ण की वह लीलाभूमि जब साक्षात् संकीर्तन की शोभा से सम्पन्न हो गयी, उस समय वहाँ रहने वाले सभी भक्तजन एकाग्रचित्त हो गये; उसी समय सबके देखते-देखते वहाँ फैले हुए तृण, गुल्म और लताओं के समूह से प्रकट होकर श्रीउद्धवजी सबके सामने आये, वे अपने मुख से श्रीकृष्ण की मधुर लीलाओं का गान कर रहे थे। श्रीउद्धवजी के आगमन से उस संकीर्तनोत्सव की शोभा कई गुनी बढ़ गयी। उद्धवजी ने वहाँ एकत्र हुए सभी लोगों को श्रीकृष्ण-कीर्तन में लगा देखकर सभी का सत्कार किया और राजा परीक्षित से कहा – 'तुम धन्य हो क्योंकि श्रीकृष्ण संकीर्तन के महोत्सव में तुम्हारा हृदय इस प्रकार निमग्न हो रहा है।' संकीर्तन करने के कारण उद्धवजी बहुत प्रसन्न हुए और उन सबकी प्रशंसा की, इसके बाद उन्होंने एक महीने तक गोवर्धन पर्वत के निकट श्रीमद्भागवत-कथा के रस की धारा बहायी और उसके प्रभाव से सभी को भगवान् श्रीकृष्ण का साक्षात्कार हो गया। इस कथा से यह पता चलता है कि 'संकीर्तन रूपी रसमय महोत्सव' उद्धवजी का अंग है, इसको करने से यह ब्रजधाम अपने वास्तविक स्वरूप का संकीर्तनपरायण श्रद्धालु भक्तों को दर्शन कराता है और संकीर्तन में सदा निमग्न रहने से इसी ब्रजभूमि में भगवान् श्रीकृष्ण का साक्षात्कार भी होता है। इसलिए सभी ब्रजप्रेमी भक्तों को चाहिए कि वे ब्रजवास करते समय अधिक से अधिक कीर्तन करें; कीर्तन करने से ही ब्रजवास करने के वास्तविक फल की प्राप्ति होती है।

आराधन-प्रेरक संत 'बाबाश्री'

'श्रीबाबामहाराज' ने तो अपनी जन्मभूमि प्रयाग से बरसाना आने पर मानमन्दिर में निवास करते समय संकीर्तन को ही अपनी साधना का मुख्य आधार बनाया। बाबाश्री के आगमन के पूर्व मानगढ़ चोर-डाकुओं का अड्डा बना हुआ था, उनके आतंक के कारण ब्रजवासी दिन में भी मानमन्दिर आने से भयभीत रहते थे, यहाँ तक कि बरसाने की परिक्रमा तक शिथिल पड़ गयी थी। परन्तु श्रीबाबामहाराज ने ब्रजवासियों को साथ लेकर मानगढ़ में जब संकीर्तन रूपी आन्दोलन का सूत्रपात किया तो उसके प्रभाव से चोर-डाकू इस स्थान को छोड़कर चले गये। 'मानगढ़' भूत-प्रेतात्माओं और सर्पों का भी आश्रयस्थल बना हुआ था किन्तु संकीर्तन की मंगलमयी ध्वनि के प्रभाव से प्रेतात्माओं का भी उद्धार हो गया तथा सर्प-अजगर आदि विषैले जन्तु भी यहाँ से दूर हो गये। श्रीबाबा महाराज का कहना है कि ब्रजवासियों की सबसे बड़ी सेवा है – 'कृष्ण नाम का दान'। इसलिए 'मानमंदिर के साधु' मधुकरी के लिए जाते समय भी धूमधाम के साथ कीर्तन करते हुए ब्रज के गाँवों में जाते हैं, ब्रजवासी उनके कीर्तन से प्रसन्न होते हैं और प्रेम से उनको भिक्षा देते हैं, इस प्रकार ब्रजवासियों के शुद्ध भिक्षान्न को पाकर मानमन्दिर के साधु-संतजन आराधनामय जीवन व्यतीत करते हैं। श्रीबाबामहाराज की यही शिक्षा है कि श्रीकृष्णगुणगान के बिना 'ब्रज' ब्रज नहीं है। इसलिए ब्रजभूमि की वास्तविक सेवा हेतु ब्रजवासियों और ब्रज के बाहर के लोगों को भी अधिक से अधिक कीर्तन करना चाहिए; ऐसा करने से ही उनका मानव-जीवन सार्थक होगा और अंत में निश्चय ही श्रीजी के नित्यधाम की प्राप्ति होगी।

'श्रीभगवन्नाम की धूम' श्रीबाबामहाराज ने गह्वरवन, बरसाना से प्रारम्भ कर इसे ब्रज के हजारों गाँवों व देश-विदेश तक फैला दी है। ब्रज के प्रत्येक गाँव में बाबाश्री के प्रयास से प्रभात फेरियाँ चलने लगीं हैं, ब्रजवासियों में भगवन्नाम के प्रति आस्था जागृत हुई। ब्रज के प्रत्येक गाँव में श्रीबाबामहाराज ने मानमन्दिर के सन्तों व साध्वियों को भेजा और वहाँ जाकर इन सभी ने भगवन्नाम-संकीर्तन की निष्काम सेवा की। सबसे प्रमुख बात यह थी कि श्रीबाबा द्वारा प्रारम्भ किया गया यह कार्य निष्काम भाव से किया गया था। श्रीबाबा से प्रेरित होकर मानमन्दिर के प्रचारकों ने कहीं से किसी से एक पैसे की भी याचना नहीं की। यहाँ तक कि जिस गाड़ी के द्वारा उन्होंने गाँव-गाँव में प्रचार किया, उसका डीजल भी वे स्वयं मान मन्दिर सेवा संस्थान के द्वारा दिए पैसे से भरवाते थे। गाँव में किसी से गाड़ी के डीजल तक का सहयोग नहीं लिया। मानमन्दिर के साधुओं ने कोई दान लिए बिना केवल ब्रजवासियों के घरों से मधुकरी (भिक्षा) माँगकर ब्रज के गाँवों में नाम-कीर्तन का प्रचार किया। इसके अतिरिक्त श्रीबाबामहाराज सभी वैष्णव-सम्प्रदायों का सम्मान करते हैं, साम्प्रदायिक संकीर्णता से वे पूर्णतया रहित हैं। इसीलिए मानमन्दिर के प्रचारकों ने भी साम्प्रदायिक भेदभाव से रहित होकर नाम का प्रचार किया। 'हरे कृष्ण महामन्त्र' और 'युगल मन्त्र' को लेकर साम्प्रदायिक लोगों ने बहुत बड़ी भेद की दीवार खड़ी कर दी है जबकि भगवान् के सभी नामों का समान महत्त्व है। भगवन्नाम को लेकर भेदभाव करना बहुत बड़ा नामापराध है। भगवन्नामों के प्रति भेदभाव करने वाले साम्प्रदायिक दुराग्रहों से ग्रसित नामापराधी लोग कितना भी नाम जप कर लें किन्तु उन्हें नाम का वास्तविक फल प्राप्त नहीं होता है, नाम-कीर्तन के अमोघ चमत्कार से वे सदा दूर रहते हैं। इसलिए मानमन्दिर के प्रचारकों ने साम्प्रदायिक संकीर्णता से मुक्त होकर निष्काम भाव से नाम-कीर्तन का प्रचार किया। इसके अतिरिक्त श्रीबाबा के द्वारा ब्रज के हजारों गाँवों में प्रभात फेरी के लिए निःशुल्क माइक और ढोलक भी वितरित किये गये; इसका यह प्रभाव हुआ कि ब्रज के गाँव-गाँव में ब्रजवासियों ने अत्यन्त उत्साह के साथ प्रभात फेरी और संध्या फेरी का कार्यक्रम आरम्भ कर दिया। ब्रज के बाहर भी भारत के तीस हजार से अधिक गाँवों में प्रभात फेरी का मंगलमय कार्यक्रम प्रारम्भ किया जा चुका है। मानमन्दिर के 'भागवत कथा प्रचारक' भी देश के विभिन्न नगरों व गाँवों में जहाँ भी 'भागवत सप्ताह कथा' करते हैं, उसका कोई शुल्क नहीं लेते हैं; श्रोताओं से दक्षिणा के रूप में उनकी यही माँग होती है कि वे अपने नगर अथवा गाँव में प्रतिदिन प्रभात फेरी में जायें, वे स्वयं भी सात दिन भागवत कथा के कार्यक्रम में प्रातःकाल प्रभात फेरी में सबको लेकर जाते हैं; इसका यह परिणाम हुआ

कि भागवत-कथा के ही माध्यम से भारत के हजारों नगरों व ग्रामों में धूमधाम के साथ प्रभातफेरी के कल्याणकारी कार्यक्रम चल रहे हैं। जो ब्रजभूमि द्वापरकाल में सदा श्रीकृष्णलीलाओं के मंगलमय गुणगान से सुशोभित रहा करती थी, उसी ब्रज में कलियुग के दुष्प्रभाव से कृष्णगुणगान पर ग्रहण-सा लग गया। सच्चरित्र भ्रष्ट करने वाले फिल्मों के दूषित गानों ने आज ब्रज के दिव्य लोकगीतों को अपनी चपेट में ले लिया है, इसका यह प्रभाव हो गया है कि अब ब्रज के नवयुवक अपनी गौरवशालिनी ब्रजसंस्कृति के श्रीकृष्णलीलाओं से भरपूर त्रिलोकपावनकारी लोक-गीतों (रसियाओं) को तिलांजलि देकर अमंगलकारी फ़िल्मी गीतों को सुनना व गाना पसन्द करते हैं। ब्रज को इस भीषण आपदा से बचाने के लिए 'श्रीबाबामहाराज' मानमन्दिर के सन्तों, साध्वियों तथा गुरुकुल के बालकों को ब्रजरस से युक्त संगीत का प्रशिक्षण दे रहे हैं। श्रीबाबा ने मानमन्दिर निवास करते समय अपने प्रारम्भिक काल में ही ब्रज के रसियाओं के एक विशाल संग्रह 'रसिया-रसेश्वरी' की रचना की थी, इनमें श्रीराधाकृष्ण के गुणों और उनकी विभिन्न लीलाओं का विस्तार से वर्णन किया गया है। श्रीबाबामहाराज की प्रेरणा से एक वर्ष पूर्व ब्रज के विभिन्न रसिक महापुरुषों द्वारा रचित ब्रज की होली के गीतों के संग्रह 'होरी-सागर' का भी मानमंदिर सेवा संस्थान द्वारा प्रकाशन किया गया है; इन सभी गीतों का मानमन्दिर के आराधना-भवन (रसमण्डप) में सायंकालीन आराधना में प्रतिदिन यहाँ की आराधिकाओं द्वारा गान व नृत्य किया जाता है, इसे ब्रजरस कहते हैं, यह ब्रजरस बड़े-बड़े देवताओं और ऋषि-मुनियों तक को दुर्लभ है। श्रीबाबामहाराज का कहना है कि वर्तमानकालीन स्कूल-कालेजों और गुरुकुलों में विभिन्न विषयों जैसे अंग्रेजी, गणित, विज्ञान, ज्योतिष, कर्मकाण्ड, व्याकरण आदि का व्यापक रूप से अध्ययन कराया जाता है किन्तु देवदुर्लभ 'ब्रजरस' का विश्व के किसी भी शिक्षण संस्थान में अध्ययन नहीं कराया जाता है, इसकी शिक्षा केवल मान मन्दिर में ही प्रदान की जाती है; यहाँ से ब्रजरस युक्त गीतों का प्रशिक्षण लेकर मानमंदिर के साधु-संत और साध्वियाँ ब्रज के गाँवों में इसका प्रचार-प्रसार कर रहे हैं।

मानमन्दिर के निकट स्थित चित्रा महासखी के गाँव चिकसौली के मंदिर में प्राचीन समय में ब्रजवासी अधिकधिक संख्या में उपस्थित होकर धूमधाम से कीर्तन किया करते थे किन्तु कुछ समय से वहाँ ब्रजवासियों की उपस्थिति नगण्य-सी होने लगी थी और इस कारण, वहाँ का कीर्तन भी विराम की दशा में पहुँच गया था; श्रीबाबा ने ऐसी स्थिति देखी तो वे स्वयं उस गाँव में गये और वहाँ के ब्रजवासियों को कृष्णगुणगानमय ब्रजरस की महिमा समझाई तथा मानमन्दिर के सन्तों व साध्वियों को भी इस पुनीत कार्य के लिए प्रेरित किया। श्रीबाबा के आदेश से साध्वियाँ और संतजन चिकसौली के घर-घर में गये और वहाँ के ब्रजवासियों को कृष्ण-गुणगान की महिमा समझाकर उन्हें पुनः जोर-शोर से कीर्तन आरम्भ करने के लिए जागृत किया। श्रीबाबामहाराज का चलाया गया अभियान सफल हुआ और अब इस गाँव में दो संध्या-फेरियाँ चलने लगी हैं। गाँव के नवयुवक विशाल संख्या में एकत्रित होकर कीर्तन करते हुए संध्या फेरी करते हैं और इसके बाद विहार कुण्ड पर स्थित मन्दिर में उत्साह के साथ एक घंटे तक ब्रजरस पर आधारित रसियाओं का गान करते हैं। इसके अलावा गाँव की महिलायें तथा बालिकायें भी अलग से एक संध्या फेरी में जाती हैं और फिर विहारकुण्ड स्थित मंदिर में एकत्रित होकर कीर्तन करती हैं। इस गाँव के अनेकों घरों में भी ब्रजवासी प्रतिदिन उत्साह के साथ कीर्तन करते हैं। श्रीबाबामहाराज की इस समय ८५ वर्ष की आयु है और अत्यन्त अस्वस्थ होने के बावजूद भी वे रसमण्डप में नित्य होने वाले संध्याकालीन संकीर्तन के उपरान्त चिकसौली गाँव के विहारकुण्ड स्थित मन्दिर में ब्रजवासियों की कीर्तन के प्रति जागृति बनाये रखने के लिए प्रतिदिन वहाँ जाते हैं और ब्रजवासियों को 'नृत्यगानमय ब्रजरस के माहात्म्य' से अवगत कराते रहते हैं। मान मन्दिर के संत और साध्वियाँ भी ब्रजवासियों को कीर्तन के प्रति उत्साहित करने के लिए प्रतिदिन श्रीबाबा के साथ ही विहारकुण्ड स्थित मंदिर में जाते हैं। रसिक संतों का कहना है कि वास्तविक 'ब्रज' वही है, जहाँ ब्रजवासी कृष्णलीलाओं का गान करते हैं, नृत्य करते हैं। श्रीमद्भागवत के अनुसार ब्रज में भी जहाँ श्रीकृष्ण-कीर्तन प्रतिदिन होता है, वहाँ धाम की शक्ति जागृत हो जाती है और जहाँ लोग कृष्णगुणगान नहीं करते, आराधना नहीं करते; वहाँ से धाम महाराज अपनी शक्ति को छिपा लेते हैं। वहाँ धाम का चमत्कार दृष्टिगोचर नहीं होता है। अतः श्रीभगवन्नाम-रूप-लीला-जन इत्यादि का गुणगान करना ही श्रीधाम की सच्ची सेवा है, जिसको नित्य निष्ठापूर्वक करने से सहज ही धाम के स्वरूप का साक्षात्कार हो जाने से रसमयी भक्ति की संप्राप्ति हो जाती है।

भगवद्-अनुभव की पहिचान 'विकार-निवृत्ति'

बाबाश्री के श्रीराधासुधानिधि-सत्संग (१२/५/१९९८) से संकलित

श्रीराधारानी के अंचल से उत्पन्न हुई वायु के स्पर्श से योगीन्द्रों के लिए भी दुर्लभ श्रीकृष्ण ने अपने को धन्य माना। जिन श्रीकृष्ण को योगीन्द्र लोग नहीं प्राप्त कर सकते हैं। योगी तो छोटी बात है, योगीन्द्रों (योगीराज, योगियों के स्वामी) तक को श्रीकृष्ण दुर्लभ हैं। अब प्रश्न हुआ कि योगी कौन हैं ? आजकल तो प्रायः ही समाचार पत्रों में छपता है अमुक योगिराजजी, योगी बाबा। किन्तु यहाँ अखबारी योगियों की चर्चा नहीं की गयी है। यहाँ तो उनकी चर्चा हो रही है जो वास्तव में योगियों में सिरमौर हैं। योगी भी बहुत प्रकार के होते हैं, जैसे - ज्ञानयोगी भी योगी है अथवा जो अष्टांगयोग करता है, वह भी योगी है; भक्तियोगी भी योगी है, प्रेमयोगी भी योगी है; 'योगी' शब्द सब जगह लग जाता है। कुछ अंग्रेजी पढ़े हुए लोग कहते हैं – I am doing yoga. मैं योगा कर रहा हूँ; इन्हें 'योग' कहना तो आता नहीं, इसलिए योगा कहते हैं; ऐसे योगा कहने वाले लोग भी अपने को योगी कहते हैं, ये लोग थोड़ी देर प्राणायाम कर लेते हैं, श्वास खींचते हैं और अपने को योगी बताते हैं।

कुछ दिन पहले मेरे पास एक योगी आये और बोले कि मैं ध्यान में बैठता हूँ तो मुझे ज्योति दिखाई पड़ती है। अब आप बताइए कि मेरी स्थिति क्या है, मैं किस जगह हूँ अर्थात् अब भगवान् कितनी दूर हैं क्योंकि ज्योति तो मुझे दिखाई पड़ती है। मैंने उनसे कहा कि जब मनुष्य सो जाता है तो सपने में भी उसे कभी-कभी सूरज-चाँद दिखाई देते हैं, रोशनी दिखायी देती है और वह अपने को उसके पीछे भागता हुआ देखता है। अब वहाँ प्रकाश कहाँ रहता है किन्तु सपने में दिखता है कि चाँदनी आई, सूरज आया; वहाँ मन ही प्रकाश बना देता है। मन से सोचते रहो – ज्योति-ज्योति, रोशनी-रोशनी तो मन ही वह रोशनी बनाता है और तुम सोचते हो कि मैं परमात्मा के पास पहुँच गया; बस, भगवान् तो थोड़ी ही दूर हैं। अरे, तुम यह नहीं समझते हो कि सूरज तो बहुत पीछे निकलता है, उसके निकलने के बहुत पहले ही अरुणिमा फैलने लगती है, रोशनी होने लगती है; सूरज निकलने के बहुत पहले से ही अँधेरा भाग जाता है। जब एक छोटे से सूरज निकलने के बहुत पहले अँधेरा भाग जाता है तो भगवान् के मन में आने के बहुत पहले ही मन के विकार काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि भाग जायेंगे। तुम जो सोचते हो कि मुझे रोशनी दिखाई पड़ी, अब भगवान् कितनी दूर रह गया है तो इस चक्कर में नहीं पड़ो। अपने मन को टटोलो कि तुम्हारे मन में काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि विकार कितने घटे हैं। 'हम भगवान् के कितने दूर हैं, कितने पास हैं' इसे इस पैमाना के द्वारा तौलो कि हमारे मन में कितना भेद मिटा, कितना काम मिटा, कितना क्रोध मिटा, कितना लोभ मिटा ?

ब्रह्माजी ने भगवान् की स्तुति करते हुए कहा है –

तावद् रागादयः स्तेनास्तावत् कारागृहं गृहम् ।
तावन्मोहोऽङ्घ्रिनिगडो यावत् कृष्ण न ते जनाः ॥

(श्रीभागवतजी १०/१४/३६)

भगवान् मिलना तो दूर है, जिस समय तुम भगवान् को अपना बना लोगे, उसी समय तुम्हारे मन के ये चोर भाग जायेंगे। चोर कौन हैं ? रागादि विकार, काम, क्रोध, लोभ, मोह – ये चोर हैं। भगवान् को अपना मानने वाले की पहली पहचान यह है कि उसके हृदय के ये चोर गायब हो जाते हैं। 'हम भगवान् से कितनी दूर हैं' यह पहिचान ब्रह्माजी ने इस श्लोक में बताई है। अपने को तौलना सीखो कि हम भगवान् से कितनी दूर हैं, नरक से कितनी दूर हैं; ब्रह्माजी इसकी पहचान बता रहे हैं। मन में अनेक प्रकार की कामनायें घुसी हुई हैं और हम कहते हैं कि अब तो हम भगवान् से मिलने ही वाले हैं। ऐसा कहते हुए तुमको शर्म नहीं आती है। मल-मूत्र के मैथुनी भोग के पीछे दौड़ने वाला कहता है कि हम भगवान् से थोड़ी दूर हैं; ऐसा कहने वाला बेशर्म है। धन रूपी मिट्टी का संग्रह करने वाला कहता है कि हम भगवान् के पास हैं, यह अपने-आप को

धोखा देना है। थोड़ी-सी बात पर क्रोध करने वाला, गाली देने, झिड़कने और लड़ने वाला कहता है कि हम भगवान् के पास हैं। अरे, भगवान् तुम्हारे हृदय में कहाँ से आ जायेगा, तुम्हारे हृदय में तो आग की भट्टी जल रही है। तुम भगवान् को कैसे पा सकते हो ? इस थर्मामीटर से अपने मन को नापो कि हम भगवान् के पास जायेंगे कि नरक में जायेंगे ? ऐसा ब्रह्माजी ने कहा है। ये चोर काम-क्रोधादि हमारे मन में दण्ड-बैठक कर रहे हैं, इसमें भगवान् कहाँ हैं ? अपने आपको पहिचानना सीखो; ये कामादि विकार रूपी भूत-प्रेत-राक्षस तुम्हारे मन में घुसे हुए हैं। जब श्रीरामचन्द्रजी प्रकट हुए तो उनकी स्तुति करते हुए कहा गया – **कामादि खल दल गंजनम्।** हे रामजी ! अब आप काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि राक्षसों को मारेंगे। रावण राक्षस नहीं था। राक्षस तो ये कामादि विकार हैं, जो हमारे मन के भीतर बैठे हुए हैं। हम समझते हैं कि रावण राक्षस था, कुम्भकर्ण राक्षस था; अरे, राक्षसों के बाप ये कामादि शत्रु तो हमारे हृदय में बैठे हुए हैं, इनके बारे में तो तुमने विचार ही नहीं किया। ब्रह्माजी अपनी स्तुति में आगे कहते हैं कि यह घर तो जेल है। जेल वह नहीं है जो मथुरा में है। जेल तो हमारा घर है और इस जेल में हम लोग बंद हैं, इसके लिए हम लोग लड़ते-झगड़ते हैं कि यह हमारी जमीन है, इसके लिए हम हजारों पाप करते हैं, यह घर जेल का बाप है। मनुष्य इस बात को समझता नहीं है कि उसका घर जेल है; इस जेल में पापी लोग रहते हैं। छोटी-छोटी बातों पर हम लोग कलह करते हैं, वास्तव में हम लोग कैदी हैं, आसक्ति में सदा मरते रहते हैं। अरे, परिवार में आसक्ति होती तो कहा जाता कि चलो, स्त्री-पुत्र में आसक्ति है किन्तु लोग कहते हैं कि यह मेरे चाचा का बेटा है, मेरे ताऊ का बेटा है, ये मेरी साली है, यह साली का बेटा है, यह समधी का नाती है; यह मेरा कुटुम्ब है, मेरा थोक (मोहल्ला) है, मेरा गाँव है। अरे राम ! राम !! राम !!! अज्ञान के कारण मनुष्य ने अपने आपको कितनी रस्सियों में बाँध रखा है - एक नहीं, दो नहीं, हजारों रस्सियाँ हैं; ऐसे में वह बन्धन से कैसे छूटेगा ? इस तरह हम लोग जेल में बंद हैं और अपने को बुद्धिमान समझते हैं। ब्रह्माजी कहते हैं इन दुनिया वालों की हालत देखो, थोड़ी देर में ये मरकर जाने वाले हैं फिर भी कहते हैं कि यह मेरा घर है और आसक्ति के कारण उसी जेल में बंद रहते हैं, उसी के लिए जीवन भर लड़ते-मरते रहते हैं। जैसे जेल में दस नम्बर कैदी के हाथ में हथकड़ी और पाँव में बेड़ी डाल दी जाती है, वैसे ही भगवान् देखते हैं कि ये लोग संसार में आसक्त हैं तो मोह की हथकड़ी-बेड़ी डाल देते हैं, क्योंकि तुम अब अच्छे रास्ते पर नहीं चल सकते हो; यह बहुत बड़ी हथकड़ी-बेड़ी है। किसी का लड़का गलत काम करके आया हो, चोरी करके आया हो तो माँ-बाप मोह के कारण उसका पक्ष लेते हैं। मोह के कारण अच्छे रास्ते पर नहीं चल सकते हैं, मोह (पक्षपात) के कारण मर जाते हैं, इस मोह के कारण समाप्त हो जायेंगे; इसी को कहते हैं – हथकड़ी (बेड़ी)। मनुष्य कितना नीच है कि हथकड़ी में बँधा है, फिर भी अपने को होशियार समझता है, वह मोह की बेड़ियों में बँधा हुआ है। जैसे गृहस्थियों के समाज में आपस में कलह होता है, वैसे ही साधु-समाज में भी रामदास कहता है कि कृष्णदास गड़बड़ है, तो कृष्णदास कहता है कि रामदास गड़बड़ है।

हमने साधुओं से कहा कि आप सब लोग मिलकर अखण्ड कीर्तन कीजिये क्योंकि माला-जप करने से करोड़ गुना लाभ भगवन्नाम-कीर्तन में है। चैतन्य चरितामृत में कहा गया है –

जपि लेते हरिनाम करिया निज साधन।
उच्च संकीर्तन करे परोपकारे॥
पशु पक्षी कीट भृंग बोलिते न पारे।
शुनि लेई हरिनाम तारा सब तरे॥

जब हम कीर्तन करते हैं तो उससे असंख्य जीवों को लाभ होता है। सुई की एक नोक पर दस हजार जीवाणु रहते हैं। पलक गिरती है तो हजारों जीव मर जाते हैं। साँस लेने पर हजारों जीवाणु शरीर के भीतर प्रवेश कर जाते हैं। भगवान् के नाम का कीर्तन जो करता है, उसके कीर्तन की ध्वनि के प्रभाव से असंख्य जीवाणुओं, अनन्त जीवों का उद्धार हो जाता है। कीड़े-मकोड़े, पशु-पक्षी आदि सभी जीव हैं, ये सभी जीव अपने पूर्व जन्मों में मनुष्य थे, मनुष्य बनकर इन्होंने भजन नहीं किया तो अब इन्हें गधा, कुत्ता, पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि योनियों में कष्ट भोगना पड़ रहा है; इन सभी जीवों का नाम-कीर्तन के द्वारा कल्याण होता है। इसलिए सब लोग अवश्य ही कीर्तन किया करो।

'गान' में नवधा भक्ति

बाबाश्री के सत्संग (गोपीगीत ३०/११/१९९४) से संकलित

जयति तेऽधिकं जन्मना व्रजः
श्रयत इन्दिरा शश्वदत्र हि ।
दयित दृश्यतां दिक्षु तावकाः
त्वयि धृतासवस्त्वां विचिन्वते ।।

(श्रीभागवतजी १०/३१/१)

श्रीधनपतिसूरजी की श्रीमद्भागवत पर टीका है – 'भागवत गूढ़ार्थ दीपिका' । गोपीगीत के प्रथम श्लोक के सम्बन्ध में इन्होंने लिखा है कि 'गान' भगवान् को बुलाने का सबसे उत्तम साधन है । नवधा भक्ति के सभी अंग 'गान' में आ जाते हैं –

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ।।

जैसे – भगवद्-गुणगान शुकदेवजी ने किया और उसे परीक्षित आदि ने सुना । 'गान' करने पर भगवान् का स्मरण भी होता ही है । 'कीर्तन' करने में भी भगवान् की महिमा का कथन अथवा गायन होता ही है । 'पादसेवन भक्ति' के अन्तर्गत भी गान में प्रभु के चरणों की महिमा को गाया जाता है । अतः अन्तःकरण या मन से पादसेवन भी हो गया । जैसे - हम भगवान् के चरण सम्बन्धी पद को गा रहे हैं –

मन रे परसि हरि के चरण ।

भगवान् के चरणों की महिमा गा रहे हैं कि उन चरणों से गंगाजी प्रकट हुईं, जिन चरणों का सेवन श्रीलक्ष्मीजी दिन-रात करती हैं । अथवा

धनि-धनि राधिका के चरण ।

इस तरह 'गान' में नवधा भक्ति के सभी अंग आ जाते हैं - श्रवण आ ही गया, कीर्तन आ ही गया, स्मरण उसमें आता ही है । 'पादसेवन' का मतलब केवल श्रीविग्रह से चरणामृत निकालना ही नहीं है, 'मन से चरणों का चिन्तन करना' यह भी पादसेवन है । श्रीजी के चरण कैसे हैं तो इस पद में आगे कहा गया है –

सुभग शीतल अति सुकोमल, कमल के से वरण ।।
नन्दसुत मन मोदकारी, बिरह सागर तरण ।

जिन चरणों के आश्रय से नन्दलाल का विरह दूर होता है ।

दास परमानन्द छिन-छिन श्याम जिनकी शरण ।।

इस तरह 'गान' में श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन हो गया । इसके बाद है – अर्चन, भगवान् की अर्चना का गीत है –

देव तुम्हारे कई उपासक, कई ढंग से आते हैं ।
सेवा में बहुमूल्य वस्तुयें, पूजा के हित लाते हैं ।।

इस पद में अर्चन की महिमा को गाया गया है तो 'अर्चन' भी गान में आ गया । वन्दना (भगवान् को प्रणाम) करने का गीत है –

मोहन मुरली वारे ! तुमको लाखों प्रणाम ।
प्रभुजी ! लाखों प्रणाम ।।

इस तरह 'वन्दन' भी गान में आ गया । 'दास्य व सख्य' के बारे में भी गाया जाता है, आत्मनिवेदन के बारे में गीत है –

सब कुछ तुम्हारा ही है,
हम सब कुछ आपको सौंपते हैं ।

इस तरह 'गान' में नवधा भक्ति आ जाती है । 'गान' की इतनी महिमा इसलिए है जिससे कि कोई यह न समझे कि 'गान' केवल एक अंग कीर्तन ही है । 'भगवद्गुणगान' में नवधा भक्ति आती है; इसलिए श्रीकृष्ण को बुलाने के लिए गोपियों ने 'गान' को ही चुना, इसमें नवधा भक्ति के सभी अंग आ गये, जैसे गोपियों ने कहा –

सुरतनाथ तेऽशुल्कदासिका.... ।

(श्रीभागवतजी १०/३१/२)

हम तुम्हारी दासी हैं, इस तरह 'दास्य' भी नवधा भक्ति में आ गया ।

त्वयि धृतासवः ... ।

(श्रीभागवतजी १०/३१/१)

गोपियाँ श्रीकृष्ण से कहती हैं कि हमारे प्राण आपमें ही हैं; इस तरह 'आत्मनिवेदन' भी आ गया । गोपीगीत में नवधाभक्ति के सभी अंग आ गये । इस दृष्टि से 'गान' की बड़ी महिमा है । सभी भक्त लोग 'गान' करते आये हैं । एक

बात और है कि गान सबसे सरस साधन है। महापुरुषों ने लिखा है कि जब हम जप करते हैं तो मन नहीं लगता है, उच्चाटन होता है। हाथों से माला चलती रहती है किन्तु मन में रस की अनुभूति नहीं होती है, नीरसता आती है क्योंकि अपना अन्तःकरण अभी इतना स्वच्छ नहीं है कि वह 'भगवान् के नाम' का आस्वादन करे। सिद्ध कोटि की स्थिति में 'नाम' का आस्वादन होता है, जैसे - गोपीजन थीं। एक गोपी ने कहा –

कृष्ण नाम जब ते सुन्यौ री आली,
भूली भवन हों तो बावरी भई री।
भरि भरि आवैं नैन, चितहूँ न परै चैन,
मुखहू न आवैं बैन, तन की दसा कछु और भई री॥
जेतक नेम धर्मकीने री मैं बहु बिधि,
अंग अंग भई हौं तौ श्रवनमयी री।
'नंददास' जाके श्रवन सुनत यह गति,
माधुरी मूरति कैंधो कैसी भई री॥

यह 'नाम-रस' की एक झाँकी है। गोपियाँ कहती हैं कि 'कृष्ण' का नाम लेना तो दूर रहा, नाम सुनने से ही हमारी यह दशा हो गयी – "भूली भवन हौं तो बावरी भई री"

यह है केवल एकबार 'कृष्ण' नाम सुनने का प्रभाव। अब विचार करो कि गोपियों का कैसा अन्तःकरण रहा होगा।

"अंग-अंग भई हौं तौ श्रवनमयी री।" गोपियाँ कहती हैं कि हमारे हर अंग में कान हो गये हैं, जैसे - राजा पृथु ने कथा सुनने के लिए भगवान् से दस हजार कान माँगे थे; गोपियाँ कहती हैं कि उसी प्रकार हमारे भी रोम-रोम में 'कृष्ण' नाम सुनने के लिए कान हो गये हैं; इसको कहते हैं 'नाम का आस्वादन'। गोपियों का कोई भी ऐसा अंग नहीं बचा, जहाँ कान न हो, उनका सारा शरीर ही कान से युक्त हो गया। "नन्ददास जाके नाम सुनियत यह गति, माधुरी मूरति कैंधो कैसी भई री॥" यद्यपि उस गोपी ने अभी तक कृष्ण को देखा नहीं था, वह कहती है कि जिसका एक बार नाम सुनने से मेरी ऐसी दशा हो गयी तो उसके रूप, उसकी मधुरता का दर्शन होने पर क्या होगा ? इससे अनुमान लगता है कि जो गोपियाँ विवाह के बाद नई-नई आयीं थीं, जिन्होंने कृष्ण को देखा नहीं था, उन्होंने एक बार कहीं से एक बार कृष्ण नाम सुन लिया और उसी एक बार के 'कृष्ण' नाम श्रवण से ही चित्त में प्रेम की ऐसी दशा हो गयी।

मेरा यह कहना है कि हम लोगों की ऐसी दशा क्यों नहीं होती है तो इसका कारण यह है कि हम लोगों के चित्त में बहुत से दोष हैं – मल, विक्षेप, कषाय आदि; इनके कारण हमें नाम का आस्वादन नहीं होता है। महापुरुषों ने लिखा है कि जब 'जप' में नीरसता का अनुभव हो, उस समय 'गान' करना चाहिए। इसीलिए प्राचीनकाल में बड़े-बड़े जपनिष्ठ जोर-जोर से भगवन्नाम लिया करते थे, जिससे कि विक्षेप-दोष दूर हो और नाम में रसानुभूति हो। चैतन्य महाप्रभु के परिकर नामाचार्य श्रीहरिदासठाकुरजी कई लाख 'श्रीभगवन्नाम' जपते थे, उसमें जोर-जोर से नामोच्चारण करने का उनका नियम था। इस तरह 'गान' से ही साधक को भगवन्नाम में सरसता का अनुभव होता है। प्रायः जप करने वालों की तुलना में कीर्तन करने वालों में बहुत अधिक भावावेश देखा जाता है, वे प्रेम में नाचते-कूदते हैं यानि उन्हें रसानुभूति होती है। इसीलिए टीकाकार आचार्य लिखते हैं कि रास में कृष्ण के अन्तर्धान होने पर उनका दर्शन पाने के लिए गोपियों ने 'गान-पद्धति' को ही चुना। नामगान या गुणगान – इस गान की महिमा के लिए ही गोपीगीत की अवतारणा हुई और यह बहुत ही सरस साधना है, इससे चित्त में कभी नीरसता नहीं आती है, चित्त कभी ऊबता नहीं है। जो साधन सरस होता है, उसका चित्त पर बहुत शीघ्र ही तीव्र प्रभाव पड़ता है। 'गान' तीन पद्धति का होता है – (१) व्यास पद्धति (२) नारदीय पद्धति (३) हनुमत् पद्धति; इसे समझ लेना चाहिए क्योंकि बिना समझे एक पद्धति वाला दूसरी पद्धति की आलोचना (बुराई) करता है और प्रायः बड़े-बड़े लोग भी ऐसी भूल करते हैं। अस्तु, गान की पहली पद्धति व्यास-पद्धति है; एक व्यक्ति कथा कहता है और बहुत से लोग सुनते हैं। जैसे - शुकदेवजी ने भागवत का गान किया और सबने सुना। यह व्यास-पद्धति का गान है। नारदीय पद्धति वह है, जिसमें संगीत भी आ जाता है। हम गा रहे हैं, लोग सुन रहे हैं। गान में स्वर, ताल और राग का प्रयोग होता है; इस तरह की पद्धति को 'नारदीय पद्धति' कहते हैं। एक अन्य विचित्र पद्धति होती है, जिसे लोग कम समझ पाते हैं, इसको हनुमत् पद्धति कहते हैं। हर आदमी नाचना तो नहीं जानता है तो वह कीर्तन में भगवत्प्रेम के कारण उछलता-कूदता है। अतः इस प्रकार की उछल-कूद की जो पद्धति है, वह हनुमत् पद्धति है।

आराधन-निष्ठ बालिका 'किशोरी'

बाबाश्री के सत्संग (एकादशी २९/४/२०११) से संकलित

प्राचीनकाल में गोकुल-महावन में एक गृहस्थ परिवार रहता था, उस परिवार में स्त्री, पुरुष और उनकी दो पुत्रियाँ थीं, पुत्र कोई नहीं था। बड़ी पुत्री का विवाह तो उसके माता-पिता ने कर दिया। छोटी पुत्री का विवाह नहीं हो सका क्योंकि बचपन में उसके शरीर पर शीतला माता (चेचक) का प्रकोप हुआ था, उस अवस्था में रोग इतना बढ़ा कि हाथ-पाँव आदि अंग गल गये; वह हाथ-पाँव से रहित होकर टोंटी हो गई थी। जब तक माँ-बाप जीवित रहे, वे उसका पालन-पोषण करते रहे। वह लड़की पलंग पर ही पड़ी रहती थी। माँ ही उसके मल-मूत्र साफ़ करती थी। एक दिन उसके माता-पिता की मृत्यु हो गयी। उसकी बड़ी बहन का भी पास के गाँव में विवाह हो गया था। यह विकलांग बालिका घर में अकेली ही रहा करती थी, उसकी बड़ी विवाहिता बहन अपने गाँव से आकर उसको भोजन करा जाती और उसके मल-मूत्र को साफ़ कर देती थी। अब जिसका विवाह हो गया था, वह तो अपने ससुराल में ही रहेगी, वह अपनी छोटी बहन की सेवा करने के लिए हर रोज दिन में एक बार आती थी। विकलांग कन्या को किसी वैष्णव ने यमुनाष्टक (यमुनाजी का स्तोत्र) सिखा दिया था। अतः वह यमुनाजी की कृपा प्राप्त करने के लिए प्रतिदिन यमुनाष्टक का पाठ करती थी। जब मनुष्य नित्य भगवान् की आराधना करता है तो समय आने पर उसको भगवान् की कृपा अवश्य मिलती है। जब दुनिया के सभी सहारे छूट जाते हैं, तब भगवान् का सहारा मिलता है। इस विकलांग कन्या की सेवा करने के लिए बहुत दिनों तक उसकी बड़ी बहन आया करती थी किन्तु उसके ससुराल वालों को यह पसन्द नहीं था, वे उसको फटकारते रहते थे कि तू प्रतिदिन उस टोंटी की सेवा करने जाती है; वह टोंटी मरती भी नहीं है, कब तक उसकी सेवा करेगी ? अरे, उसको जहर दे दे जिससे कि वह मर जाए, कब तक तू उसकी सेवा करती रहेगी, कब तक उसके मल-मूत्र को साफ़ करती रहेगी ? दुनिया के लोग बड़े बुरे होते हैं, ये लोग किसी को सेवा करना, प्रेम करना तो सिखाते नहीं हैं। बड़ी लड़की के ससुराल वाले उसको अपनी छोटी बहन की सेवा के लिए जाने के कारण बहुत डाँटते थे किन्तु वह नहीं रूकती थी और प्रतिदिन अपनी छोटी बहन की सेवा करने के लिए आ जाती थी; इसका कारण यह था कि मरते समय उसके माता-पिता कह गये थे कि तू अपनी छोटी बहन का ध्यान रखना। पहले पिता की मृत्यु हुई, उसके बाद माँ की मृत्यु हुई। माँ ने मरते समय अपनी बड़ी पुत्री से कहा था – 'बेटी ! वैसे तो तू अब पराये घर की हो गयी है। विवाह होने पर लड़की परायी हो जाती है। किन्तु यह तेरी छोटी बहन है, यह बिना सेवा के भूखी-प्यासी मर जाएगी। इस पर दया करना, तेरी ससुराल पास में ही है, इसलिए दिन में एक बार आकर अपनी छोटी बहन को भोजन करा देना, इसके मल-मूत्र साफ़ कर दिया करना। बेटी, मैं तो अब जा रही हूँ, अब तू ही इसकी माँ है।' ऐसा कहकर माँ की मृत्यु हो गयी। अपनी माँ की आज्ञा का पालन करते हुए बड़ी बहन बहुत दिनों तक अपनी छोटी बहन की सेवा करने आती रही परन्तु उसके ससुराल वाले उससे बहुत लड़ते थे; सास, ससुर, ननद सब फटकारते कि कहाँ जाती है ? अरे, अपनी छोटी बहन को जहर देकर मार दे। मना करने पर भी वह लड़की अपनी बहन की सेवा करती रही। एक दिन उसके घर में बहुत लड़ाई हुई, सास चिल्लाई – 'घर में इतने सारे काम हैं, उन्हें नहीं करती है और रोज उस टोंटी के पास भाग जाती है, उसे मरने दे।' ससुराल वालों की डाँट-फटकार सुनकर वह अपनी बहन की सेवा करने नहीं गयी। जब बड़ी बहन नहीं आई तो यह विकलांग कन्या अपने बिस्तर पर पड़ी हुई 'यमुनाष्टक' का बार-बार पाठ करने लगी और यमुनाजी से कहती – 'हे यमुना मैया ! मैं तो तेरी शरण में हूँ। मेरी न तो माँ है, न बाप है। एक बहन थी, अब तो वह भी नहीं आ रही है। हे यमुना मैया ! तू मुझे मार दे। मैं इस दशा में पड़ी हुई कब तक तड़पती

रहूँगी। तू मुझे मृत्यु दे दे, जिससे कि मैं शीघ्र ही मर जाऊँ।' इस प्रकार यमुनाष्टक का पाठ करती और यमुनाजी से प्रार्थना करती हुई यह लड़की रो रही थी। जब दुनिया के सब सहारे छूट जाते हैं और कोई एकमात्र भगवान् का ही सहारा पकड़ता है तो उस समय भगवान् अवश्य आते हैं। दुःशासन द्वारा साड़ी खींचे जाने पर जब तक द्रौपदी ने अपने पतियों की ओर देखा, दूसरे लोगों की सहायता माँगी, भगवान् नहीं आये। जब कहीं से भी सहायता न मिलने पर द्रौपदी ने अपने दाँतों से साड़ी का पल्लू दबाया, तब भी भगवान् नहीं आये। जब दाँत से साड़ी छूट गयी और द्रौपदी चिल्लाई –

'गोविन्द ऽ ऽ ऽ !' उस समय भगवान् आ गये और उसकी साड़ी में प्रवेश कर गये।

हम लोग जब तक दुनिया का सहारा लेते हैं, तब तक भगवान् नहीं आते हैं। यह विकलांग कन्या असहाय होकर प्रार्थना करने लगी – 'हे यमुना मैया ! तू मुझे मार दे। मैं बिना अन्न-जल के तड़प-तड़पकर इस प्रकार नहीं जीना चाहती। मुझे रोटी तो क्या, कोई पानी देने वाला भी नहीं है।' इस प्रकार यह अकेली असहाय कन्या रो रही थी और यमुनाष्टक का पाठ भी कर रही थी; उसकी करुण पुकार यमुनाजी ने सुन ली, उन्होंने इस कन्या की बड़ी बहन जैसा रूप बनाया और उसके घर पहुँचकर दरवाजा खोलकर भीतर गयीं। उस लड़की ने उन्हें देखा तो सोचने लगी कि यह तो मेरी बहन आ गयी। दीदी...दीदी... कहकर वह रोने लगी। यमुनाजी ने उससे कहा – 'तू रोती क्यों है ? आज मैं समय से नहीं आ सकी क्योंकि मेरे घर वाले मुझसे लड़ रहे थे किन्तु तू घबरा मत, मैं प्रतिदिन तेरी सेवा करने आया करूँगी।' यमुनाजी ने उस लड़की के लिए भोजन बनाकर, उसे बैठाकर अपने हाथों से खिलाया और फिर चली गयीं। यमुनाजी द्वारा खिलाये गये एक दिन के भोजन से ही उस लड़की का आधा रोग चला गया। यमुनाजी दूसरे दिन फिर आयीं, उन्होंने भोजन बनाया और उस लड़की को अपने हाथों से खिलाया। लड़की ने जैसे ही पूरा भोजन खाकर समाप्त किया, वैसे ही उसका सारा रोग चला गया; उसने यमुनाजी से कहा – 'बहन ! अब तो मेरे हाथ-पाँव ठीक हो गये हैं, चलने-फिरने, काम करने योग्य हो गये हैं। अब तो मैं बिना किसी की सहायता के स्वयं ही बैठ सकती हूँ।' 'यमुनाजी' अभी बड़ी बहन के रूप में ही थीं, अपने वास्तविक रूप में नहीं थीं, अतः अपने उसी रूप से उन्होंने कहा – 'बहन ! यह तो तेरी भक्ति का प्रताप है। तूने यमुनाष्टक का पाठ किया, तू रो-रोकर यमुनाजी को बुला रही थी, उसी का यह प्रभाव है कि तू ठीक हो गयी। वह लड़की अब तो उठकर खड़ी हो गयी और हँसने लगी, उसने कहा – 'अरे, अब तो मैं ठीक हो गयी।' उसकी बात सुनकर यमुनाजी ने पूछा – 'अच्छा तो अब कल मैं तेरी सेवा के लिए आऊँ कि नहीं ?' लड़की ने कहा – 'अब तो अपना सारा कार्य मैं स्वयं ही कर लूँगी। बहन ! इतने दिनों तक तुमने मेरी बहुत सेवा की।' इस लड़की का नाम था – 'किशोरी'। तीसरे दिन वह स्वयं ही उठी और उसने अपने लिए भोजन बनाया। वह गोस्वामी विट्ठलनाथजी की शिष्या थी तो उन्होंने उसे ठाकुरजी की सेवा न देकर यमुनाजी की रेती दी थी, उन्होंने सोचा था कि यह तो टोंटी है, ठाकुरजी की सेवा कर नहीं पाएगी, इसलिए उन्होंने किशोरी को यमुनाजी की रेती देते समय कहा था कि इस रेत को प्रतिदिन अपने माथे से लगा लेना। इतना करने से ही तेरे द्वारा ठाकुर सेवा हो जाएगी। इसलिए गुरुदेव की आज्ञानुसार भोजन बनाने के बाद उसने यमुनाजी की रेती के सामने भोग रखा। भोग रखने के बाद उसने आनन्द से प्रसाद पाया और उसके पश्चात् यमुनाजी के नाम का कीर्तन करने लगी – 'जय यमुना मैया, जय यमुना मैया।' सारे दिन वह कीर्तन करती रही क्योंकि उसने चमत्कार देख लिया था। यमुनाजी उससे कह गयीं थीं कि तेरे भीषण रोग ठीक होने का कारण है तेरी भक्ति।

इसलिए भक्ति सच्ची होनी चाहिए, दुनिया को दिखाने के लिए भक्ति नहीं करनी चाहिए। चौथा दिन हुआ तो किशोरी की बड़ी बहन ने अपने घर में सोचा कि मैं तो किशोरी के पास गयी नहीं, इसलिए अब तो वह भूखी-प्यासी मर गयी होगी, मुझे उसके मृतक देह का अंतिम संस्कार करने जाना चाहिए; उसकी सास ने भी कहा कि

तेरी बहन तो अब मर गयी होगी, जाकर उसका अंतिम संस्कार कर आ। किशोरी की बड़ी बहन जब उसके घर पहुँची तो देखा कि वह तो भोजन बना रही थी। पहले वह टोंटी थी, हाथ-पाँव ही काम करने लायक नहीं थे परन्तु अब तो वह रोटी बनाने के लिए आटा गूँथ रही थी। यह देखकर बड़ी बहन तो अत्यधिक आश्चर्यचकित हो गयी और कहने लगी – 'अरी किशोरी ! ये क्या हो गया ?' किशोरी को तो यही लगता था कि अब तक मेरी बहन ही सेवा करने आती थी, यही मुझे भोजन कराती थी। अतः उसने कहा – 'हाँ बहन ! तुमने ही अपनी सेवा से मुझे ठीक कर दिया। मैं तुम्हारा उपकार कैसे भूल सकती हूँ ?'

ऐसा कहकर किशोरी अपनी बड़ी बहन से लिपटकर रोने लगी। बड़ी बहन ने आश्चर्य से पूछा – 'अरे, मैंने तुझे कब ठीक किया ?' किशोरी बोली – 'अरी बहन ! तुमने अभी दो दिन जो मुझे भोजन कराया, उसी के प्रभाव से मैं ठीक हो गयी।' बड़ी बहन ने कहा – 'अरे, मैं तो चार दिन से तेरे पास आई ही नहीं और फिर मैंने सोचा कि तू तो अब मर गयी होगी इसलिए आज तेरा अंतिम संस्कार करने आई थी।' किशोरी ने पूछा – 'तुम चार दिन से नहीं आई ?' बड़ी बहन – 'बिल्कुल भी नहीं आयी।'

किशोरी – 'फिर चार दिनों तक तुम्हारे ही रूप में मेरी सेवा करने कौन आयी और मुझे दो दिन में ही ठीक कर गयी। ओह ! अब समझ में आया, वह तो यमुनाजी थीं। यमुना मैया वेष बदलकर मेरी सेवा करने आती थीं, उन्होंने ही मुझसे कहा था कि तेरी भक्ति के ही कारण तेरा रोग ठीक हो गया है। हाथ-पाँव पुनः निकल आये, शरीर में ताकत आ गयी।' किशोरी की बात सुनकर उसकी बड़ी बहन बहुत प्रसन्न हुई और अपने गाँव के लोगों से बोली – 'अरे तुम सब मेरे साथ चलो और देखो कि यमुनाजी ने किशोरी को ठीक कर दिया। उसके हाथ-पाँव निकल आये हैं।' उसकी बात सुनकर सारा गाँव 'किशोरी' को देखने के लिए आया और उसको पूर्णतया स्वस्थ देखकर सारे गाँव के लोग श्रीयमुनाजी के भक्त बन गय

गौ-सेवकों की जिज्ञासा पर माताजी गौशाला का

Account number दिया जा रहा है –

SHRI MATAJI GAUSHALA, GAHVARVAN,

BARSANA, MATHURA

Bank – Axis Bank Ltd A/C – 915010000494364

IFSC – UTIB0001058

BRANCH – KOSI KALAN

MOB. NO. - 9927916699

फलाकांक्षा के त्याग से विशुद्ध योग

बाबाश्री के श्रीमद्भगवद्गीता-सत्संग (२९/१/२०१२) से संकलित

श्लोक – ४४

भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम् ।
व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते ॥

(श्रीगीताजी २/४४)

यह श्लोक (२/४४) गीता का अत्यधिक प्रसिद्ध श्लोक है और भगवान् ने ऐसा निर्णय दिया है कि भोग और ऐश्वर्य में फँसने के बाद बुद्धि कभी भी भगवान् में नहीं लगेगी। इस श्लोक में 'समाधि' शब्द का अर्थ – 'भगवान्' है। भोग और ऐश्वर्य में आसक्त बुद्धि सदा इसी तिकड़म में रहेगी कि कैसे भोग मिले, कैसे ऐश्वर्य मिले। इसलिए जिसको सच्चाई के साथ ईश्वर-प्राप्ति करनी है, उसे अपनी बुद्धि को भोग व ऐश्वर्य से अलग रखना चाहिए। संसार में प्रतिष्ठा भोग व ऐश्वर्य की ही होती है, इसीलिए साधु लोग अधिक से अधिक पंगतों का आयोजन करते हैं अपना यश अर्जित करने के उद्देश्य से, ऐश्वर्य की दृष्टि से। यदि 'बुद्धि' भोग और ऐश्वर्य में गयी तो भगवान् से बिलकुल अलग हो जाएगी।

श्लोक – ४५

त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन ।
निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान् ॥

(श्रीगीताजी २/४५)

जितने भी विषय हैं, ये त्रिगुणमय हैं। वेद भी त्रिगुणमय विषयों का वर्णन करते हैं। अतः तुम विषयों अर्थात् फलों का त्याग करने से निस्त्रैगुण्य हो जाओगे। जो मनुष्य विषयों का त्याग करता है, वह गुणातीत हो जाता है, उसकी पहचान यह है कि उसमे द्वंद्व (राग-द्वेष) नहीं रहता है, योगक्षेम की चिंता नहीं करता तथा संयमी होता है। योगक्षेम की चिंता करने वाला निस्त्रैगुण्य नहीं होता, विषयत्यागी नहीं होता। गुणातीत पुरुष के लक्षण होते हैं – वह द्वंद्व (राग-द्वेष) रहित होता है, नित्य ज्ञान में स्थित रहता है, योगक्षेम की कुछ भी परवाह नहीं करता तथा संयमी होता है।

श्लोक – ४६

यावानर्थ उदपाने सर्वतः सम्प्लुतोदके ।
तावान्सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः ॥

(श्रीगीताजी २/४४)

जैसे किसी को बहुत बड़ा जल का सरोवर प्राप्त हो जाने पर भी पीने के लिए थोड़े ही जल से काम चल जाता है, उसी प्रकार जो ज्ञानी ब्राह्मण है, वह समस्त वेदों में थोड़े में ही काम कर लेता है। (अधिक फल की, अधिक इच्छाओं की आवश्यकता नहीं रखता और गुणातीत हो जाता है।) विशाल सरोवर के प्राप्त होने पर भी थोड़े-से ही जल से मनुष्य का काम चल जाता है जबकि उसमें चारों ओर अथाह जल भरा है किन्तु उससे मनुष्य का कोई प्रयोजन नहीं रहता। वैसे ही मनुष्य को कर्म करते समय अनेक फलों की प्राप्ति के बाद भी अपने प्रयोजन के अनुसार थोड़े में ही काम चला लेना चाहिए। अधिक जल अर्थात् अधिक फलों की कामना नहीं करनी चाहिए। विशाल जलराशि से भरे सरोवर में थोड़े-से ही जल से प्यास बुझ जाती है, उसी में प्रयोजन पूरा हो जाता है, इसी प्रकार कर्म करने पर बहुत से फल मिलते हैं, उनको छोड़कर थोड़े में ही काम चल जाए; बस यही बुद्धिमान ब्राह्मण का लक्षण है।

श्लोक – ४७

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥

(श्रीगीताजी २/४७)

दो अधिकार होते हैं – कर्माधिकार और फलाधिकार। 'कर्माधिकार' माने कर्म करना, 'फलाधिकार' माने उसका फल चाहना। संसार में सारे मनुष्य फलाधिकार के लिए लड़ते हैं – हमको अधिक धन मिले, अधिक वस्तुएँ मिलें, अधिक सम्मान मिले किन्तु जो बुद्धिमान मनुष्य हैं, वे कर्माधिकार के लिए, कर्म करने के लिए लड़ते हैं, वे फलाधिकार के लिए कभी भी नहीं सोचते कि हमने इतनी

मेहनत की और हमें कम प्राप्ति हुई; फलाधिकार के बारे में तो वे कभी सोचते ही नहीं हैं। इस श्लोक में भगवान् ने बताया कि कर्मफल के कारण से कर्म मत करो तथा अकर्मा भी मत बनो कि कर्म ही छोड़ दो। कर्म तो हमेशा ही करना चाहिए। कर्मफल के हेतु भी मत बनो और अकर्मा भी मत बनो। कर्म करो लेकिन फल के बारे में कभी मत सोचो। मूल बात यह है कि फल का त्याग करना चाहिए, जैसे हम यदि किसी काम को इस अभिप्राय से करें कि लोग हमारी प्रशंसा करें तो यह गलत है। अपनी प्रशंसा के बारे में सोचना फल है, अपनी तारीफ के बारे में मत सोचो। यश दूसरे को दे दो – यह बुद्धिमान का लक्षण है। बुद्धिमान व्यक्ति कहता है कि यह काम मैंने नहीं किया, यह तो इन्होंने किया; इसलिए बड़प्पन दूसरे को दे दो, यह फलाधिकार का त्याग है और तुम यदि अपना ही सम्मान, अपनी ही प्रतिष्ठा चाहते हो तो वह फलाधिकार का त्याग नहीं है, वह तो फल को भोगना है। मनुष्य मान-सम्मान का भोग करता है। अपने मान-सम्मान को पाकर प्रसन्न होता है तो वह विद्वान नहीं है, ब्राह्मण नहीं है, वह भोगी है, फलाधिकार को लक्ष्य बनाकरके चल रहा है। हर समय फलाधिकार से बचना चाहिए, यदि मनुष्य फलाधिकार से बच जायेगा तो उसके अंदर राग-द्वेष पैदा नहीं होगा; यह लक्षण है। फलाधिकार जहाँ है, वहाँ राग-द्वेष रूपी द्वंद्व रहते हैं। मनुष्य सोचता है कि उस व्यक्ति को सम्मान अधिक मिला, हमें नहीं मिला, मैंने इतना बढ़िया गीत गाया, इतनी बढ़िया मेरी कला है लेकिन पुरस्कार दूसरे को मिला, धन किसी और को मिला; ये सब चीजें जब हृदय में आती हैं तो समझ लेना चाहिए कि फलाधिकार का त्याग बहुत दूर है और हम पारमार्थिक नहीं हैं, सांसारिक हैं। विद्वान् पुरुष फलाधिकार को छोड़ देते हैं, जो कि आज के युग में असम्भव है। फलाधिकार छोड़ने वाले हजारों-लाखों में कोई-कोई ही विद्वान् होते हैं। यदि मनुष्य फलाधिकार छोड़ना सीख जाए तो वह भगवान् का प्यारा बन जाएगा। भगवान् ने इस श्लोक में जोर देकर कहा – **मा फलेषु कदाचन।** 'कदाचन' का अर्थ है कि यदि भूखे भी मर रहे हो तो भी फलाधिकार की मत सोचो, 'कदाचन' शब्द बहुत कठोर है। '**मा कर्मफलहेतुर्भू'-** कर्मफल की इच्छा से कोई कर्म मत करो और अकर्मा भी मत बनो कि मेहनत हम करें और पैसा कहीं दूसरे लोगों को न मिल जाए, सम्मान कहीं दूसरों को न मिल जाए। नहीं, यदि तुमने सम्मान को छोड़ दिया तो तुम भगवान् के प्रिय बन जाओगे। कर्म खूब करो किन्तु उसका फल दूसरों को दे दो, कहो कि हाँ, सब काम इन्होंने ही किया है, इन्होंने ही सभा को जमाया, इस प्रकार सम्मान दूसरों को दे दो। 'कदाचन' का अर्थ है कि कभी भी, किसी भी अवस्था में भी फलों की ओर मत सोचो परन्तु ऐसा होना बहुत कठिन है। मेहनत हम करें और पैसा दूसरों के पास चला जाये तो हृदय में संताप होगा और विचार आयेगा कि मेहनत हमने की और उसका फल इसने ले लिया। भगवान् कहते हैं कि ऐसा ही होना चाहिए, ऐसे ही मूर्ख बन जाओ। श्रीमद्भागवत में वर्णित है कि जड़भरतजी सारे दिन काम करते थे और उसका फल दूसरे लोग ले लेते थे तथा उनको खाने के लिए भी सड़ा-गला अन्न दे देते थे लेकिन वह उसी में प्रसन्न रहते थे। इसीलिए राजा रहूगण ने उनको पहचान कर महापुरुष मान लिया। शुरू में न पहचानने के कारण रहूगण ने उनका अपमान किया तथा फटकारा कि तू मरना चाहता है, मैं तुझे फाँसी पर चढ़ा दूँगा लेकिन जड़भरतजी मुस्कुराते रहे तो रहूगण समझ गया कि यह फलाधिकार या द्वंद्व से रहित हैं, ये तो महापुरुष हैं। 'जड़भरतजी' की तरह बनना कठिन है। दिन भर काम किया और परिश्रम का फल कोई दूसरा ले गया तो मनुष्य के हृदय में संताप पैदा हो जायेगा, वह संताप में जलेगा, कुढ़ेगा, मरेगा, निर्द्वन्द्व नहीं हो सकता। श्रीगीताजी के श्लोक २/४५ में भगवान् ने कहा –

निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्।

इस श्लोक का एक-एक अर्थ समझना कठिन है। भगवान् कह रहे हैं कि योगक्षेम के लिए भी बचाकर मत रखो, सब कुछ लुटा दो, द्वंद्व रहित हो जाओ; ऐसा चाहते हैं भगवान्। **कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन** – यह श्लोक २/४७ गीता का सार है।

साध्वी श्रीगौरीजी द्वारा श्रीमदभागवत कथा का सरस प्रवाह नरसिंह पुर (म. प्र.), झाँसी उ. प्र., हरदोई (उ.प्र.)

श्री बरसाना धाम की परिक्रमा करते हुए बाबाश्री।

RNI Reference No. 1313397 - Registration No. UP BIL-2017/72945 - Title Code UP BIL-04953
Postal Regd. No. MTR 093/2021-2023
श्री मान मंदिर सेवा संस्थान के लिए प्रकाशक/मुद्रक एवं संपादक राधाकांत शास्त्री द्वारा Gupta Offset Printers A -125 /1, Wazirpur Industrial Area, New Delhi -52 से मुद्रित एवं मान मंदिर सेवा संस्थान, गह्वर वन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.) से प्रकाशित